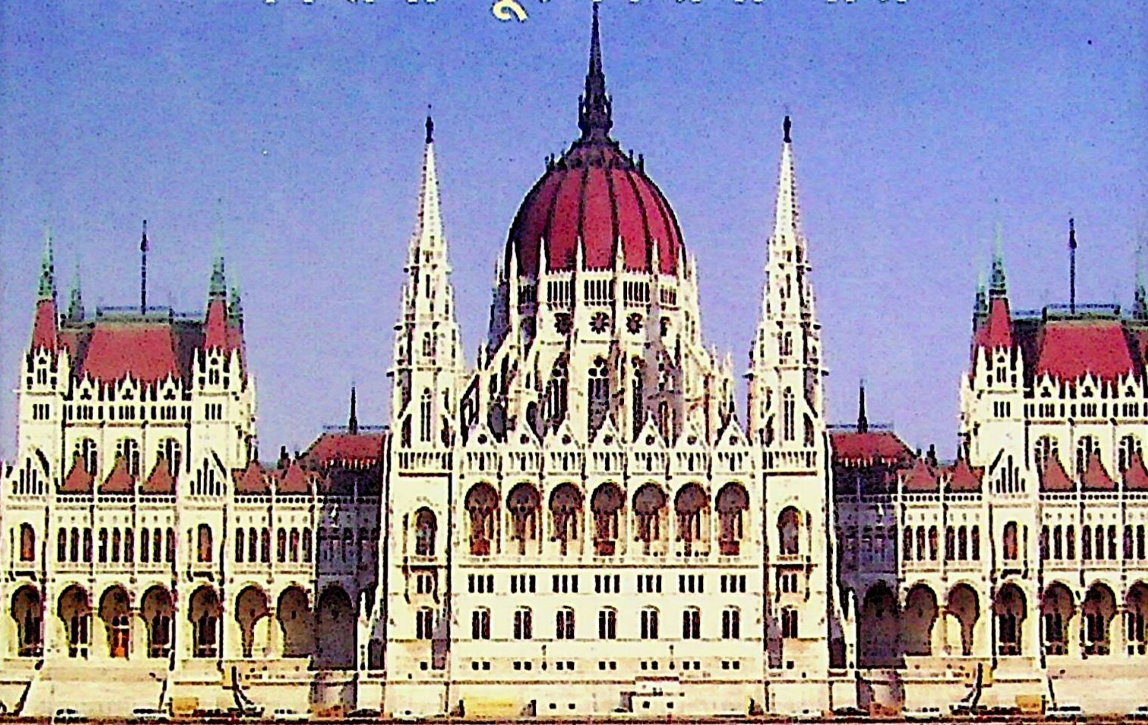
हंगरी

कितनी दूर कितनी पास



सत्यव्रत शास्त्री

हंगरी

कितनी दूर कितनी पास

सांस्कृतिक यात्रा संस्मरण

हंगरी
कितनी दूर कितनी पास

सांस्कृतिक यात्रा संस्मरण

सत्यव्रत शास्त्री
अभ्यर्हित आचार्य,
विशिष्ट संस्कृत अध्ययन केन्द्र
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
पूर्व आचार्य एवम् अध्यक्ष
संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय
पूर्व कुलपति, श्री जगन्नाथ संस्कृत विश्वविद्यालय
पुरी, ओडिशा



विजया बुक्स
दिल्ली

प्रकाशक

विजया बुक्स

1/10753 सुभाष पार्क, गली नं. 3

नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

फोन : 011-22822514; 9910189445

Email : vijyabooks@gmail.com

rajeev02sharma@gmail.com

प्रथम संस्करण : 2011

ISBN : 978-93-81480-16-8

मूल्य : ₹ 250/-

मुद्रक :

विकास कम्प्यूटर एण्ड प्रिण्टर्स

नवीन शाहदरा, दिल्ली 110032

अनुक्रम

पुरोवाक्

अपने आज तक के जीवन-काल में मैं अनेक देशों में गया। हंगरी उन कतिपय देशों में से है जहाँ मेरा एकाधिक बार जाने का प्रसंग बना। इसने अवसर दिया मुझे उस देश को देखने का, जानने का और समझने का। हर बार की मेरी वहाँ की यात्रा एक नवीन जानकारी को लेकर आई। प्रत्येक बार की यात्रा के मैंने संस्मरण लिखे और हर यात्रा के संस्मरणों में पूर्व यात्रा के संस्मरणों से भेद था; हर बार एक नवीन दृष्टि थी, पहले देखे हुए स्थानों और पहले मिले हुए विद्वानों के बारे में भी। यही कारण है कि इन संस्मरणों में यत्किंचित् अपवाद के साथ पुनरुक्ति नहीं है। प्रत्येक संस्मरण अपने में एक अलग संस्मरण है और यही इन संस्मरणों की विशेषता है।

हंगरी भौगोलिक दृष्टि से भारत से बहुत दूर होते हुए भी भावनात्मक दृष्टि से इससे बहुत निकट है। भारतीयों को वहाँ बहुत आदर से देखा जाता है। भारतीय लेखकों की कृतियों के कई-कई हज़ार के संस्करण वहाँ प्रकाशित हुए हैं और बिके हैं। यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि हंगरी बहुत बड़ा देश नहीं है। वहाँ भारतीय लेखकों की कृतियों के, हंगेरियन अनुवाद में, इतने अधिक संस्करणों का प्रकाशित होना वहाँ के लोगों के मन में भारत के प्रति एक विशेष लगाव को द्योतित करता है।

हंगरी के भारत के प्रति लगाव का एक और भी कारण हो सकता है। दोनों ने विदेशी आक्रमणों की मार को झेला है। बाहर की अनेक शक्तियों ने इन पर शासन किया है, इन्हें अपने अधीन रखकर इन पर

अत्याचार किए हैं। नियति एक सी होने ने भी इन्हें एक-दूसरे के निकट ला दिया है।

हंगरी निवासियों का मूल कहाँ था, यह बहुत समय से हंगरी के विद्वानों के खोज का विषय रहा है। इसी खोज ने शान्दोर चोमा द करश जैसे व्यक्ति को अनेक देशों की यात्रा के लिए प्रेरित किया। इन यात्राओं के दौरान वह भारत तक पहुँचा जहाँ उसने लद्दाख को अपनी कर्मभूमि बनाकर वहाँ के बौद्ध मन्दिरों के विशाल पाण्डुलिपि-संग्रहालयों के अवलोकन में अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित करने की ठान ली। उसने तिब्बती भाषा का अध्ययन किया, उसका व्याकरण लिखा, उसका शब्दकोष तैयार किया और इस प्रकार वह तिब्बती अध्ययन-अनुसंधान का प्रतिष्ठापक बन बया।

भारत में ही इस महामनीषी ने अपनी इहलीला समाप्त की।

यह उनका भारत के प्रति प्रेम ही था जो हंगरी की सुप्रसिद्ध चित्रकार माता एलिज़बेत शौश ब्रूनर और पुत्री एलिज़ाबेत ब्रूनर को भारत खींच लाया।

हंगरी की कवियों, लेखकों, चित्रकारों, संगीतकारों, और विचारकों की सुदीर्घ परम्परा रही है जिसने उस देश को गरिमा प्रदान की है। हंगरी में जाने पर उनके व्यक्तित्व और कृतित्व को निकट से जानने और समझने का अवसर मुझे मिला। इसके साथ ही वहाँ के इतिहास को वहाँ के लोगों के मुख से जानने और समझने का भी।

आज के भारतीय विद्या के अध्येताओं से वहाँ सम्पर्क हुआ। उनसे विस्तृत चर्चाएँ हुईं, जिनमें शास्त्रीय विषयों के अतिरिक्त उनके व्यक्तिगत जीवन और चिन्तन के बारे में उनसे जानकारी मिली। यह वह जानकारी है जो अन्यत्र कहीं से उपलब्ध नहीं हो सकती थी। उनकी कहानी उनकी अपनी जुबानी! यह सब इस पुस्तक में मैंने दी है। इस अमूल्य सामग्री को पाठकों को सुलभ कराने के लिए ही मैंने प्रस्तुत कृति की रचना में अपने को प्रवृत्त किया।

हंगरी एक अत्यन्त रमणीय देश है। इसके दर्शनीय स्थानों की रमणीयता का आभास पाठकों को भी हो सके, इसलिए इसके जिन-जिन आकर्षक स्थानों में मैं गया उनका विस्तृत विवरण भी मैंने इस पुस्तक में दिया है। पाठकों से सही संवाद स्थापित हो सके इसलिए उन आकर्षक स्थानों के चित्र भी पुस्तक में मैंने दिए हैं।

हंगरी में लिखने के लिए रोमन लिपि का ही प्रयोग है पर शब्दों का उच्चारण वहाँ अंग्रेज़ी की तरह का नहीं है। देवनागरी लिपि में हंगेरियन शब्दों का हंगेरियन उच्चारण ही अपनाया जाए यह मेरी दृष्टि रही है। उस उच्चारण को सही से पकड़ पाने में मेरी सहायता की है डॉ. इन्दु मसालदान ने जिन्होंने पर्याप्त समय हंगरी में बिताया है और अनेक हंगेरियन कृतियों का हिन्दी में अनुवाद किया है। उनके सहयोग के लिए मैं उनका कृतज्ञ हूँ। प्रस्तुत कृति के प्रूफ़ संशोधन में जो सहायता श्रीगंगानगर के मेरे मित्र डॉ. सत्यव्रत वर्मा ने की तदर्थ उनका भी मैं आभारी हूँ।

मुझे आशा है कि सुधी पाठकों को यह कृति रुचेगी, एवं इसके माध्यम से वे सुदूरवर्ती हंगरी देश को अधिक अच्छी तरह जान पाएँगे और तब उन्हें स्पष्ट हो जाएगा कि एक दूसरे से दूर होते हुए भी वे इसके कितने पास हैं।

—सत्यव्रत शास्त्री

नई दिल्ली

14.4.2011

हंगरी यात्रा

(1)

1977

सन् 1977 का जुलाई का महीना। मैं और धर्मपत्नी तृतीय विश्व संस्कृत सम्मेलन में भाग लेने पेरिस गए थे। वहाँ से हम बैल्जियम, जर्मन प्रजातान्त्रिक गणराज्य, पोलैण्ड आदि अन्य देशों में भी गए। दिल्ली विश्वविद्यालय में हंगेरियन भाषा के प्राध्यापक, भारतीय विद्या विशेषज्ञ, प्रो. गेज़ा बैत्लैनफ़ॉल्वी के सौजन्य से हंगरी के सांस्कृतिक सम्बन्ध संस्थान, इन्स्टिट्यूट आफ़ कल्चर, ने हमें दस दिन हंगरी में रहने के लिए आमंत्रित किया था। उसी के फलस्वरूप हमारा हंगरी में जाना हुआ। हम वहाँ 23 जुलाई, 1977 को पहुँचे। उपरिनिर्दिष्ट इन्स्टिट्यूट की एक प्रतिनिधि श्रीमती लिलि वॉगो हमें लेने हवाई अड्डे पर आई हुई थी। उसने हमें हमारे लिए पूर्वनिर्धारित होटल में पहुँचा दिया, सब प्रकार की व्यवस्था हमारे लिए कर दी और यह कहते हुए कि इस समय आप थके-माँदे होंगे, आपको आराम की आवश्यकता है, कल फिर भेंट होगी, हमसे विदा ली।

जिस होटल में हमें ठहराया गया था उसका नाम था सौबौत्शाग। अंग्रेज़ी में इसकी वर्तनी बड़ी विचित्र है। पहले कुछेक दिन तो ठीक से इसका उच्चारण भी हम नहीं कर पाए थे। होटल में विश्राम करते समय हमारा मन अनायास ही श्रीमती लिलि वॉगो की ओर खिंच गया। विचित्र

महिला लगी वह हमें। एयरपोर्ट से होटल तक तथा होटल में भी जितनी देर वह हमारे साथ रही, ढेरों बातें करती रही। 60 वर्षीय उस वृद्ध महिला ने हमें बताया कि वह महर्षि महेश योगी की भक्त है तथा जब वह स्वीडन में थी तो उसने स्टाकहोल्म के ध्यान-केन्द्र का एक कोर्स किया था। उससे उसे अपार मनश्शान्ति मिली थी। उसने अपने पर्स में अगरबत्ती की एक पिचकी हुई खाली डिबिया भी रखी हुई थी। एयरपोर्ट से शहर की ओर जाते समय ही उसने हमें उसे दिखा दिया था और कहा था कि हंगरी में ये चीजें दुर्लभ हैं। मैंने इसे ही सँभालकर रखा हुआ है। अगरबत्ती तो एक प्रतीक थी। भारतीय धर्म सम्बन्धी चीज़ों के प्रति उसका इस प्रकार का मोह देख हम अभिभूत हो उठे थे। होटल में पहुँचते ही हमने उसे अगरबत्ती की डिबिया (हम अपने साथ कुछेक ले गए थे मित्रों और परिचितों को भेंट करने के लिए) और रुद्राक्ष की माला दी। उसने बहुत भक्तिभाव से इन दोनों को ग्रहण किया, मानो उसे कोई बहुत बड़ी निधि मिल गई हो। बार-बार उसने हमें धन्यवाद दिया और चल दी।

अगले दिन 24-7-1977 को नगर देखने का कार्यक्रम था। बस के टिकट पहले ही ले लिए गए थे। तीन बजे हम उसमें सवार हुए। नगर के अनेक महत्त्वपूर्ण स्थान देखे। बस की गाइड अंग्रेज़ी और जर्मन (दो-तीन जर्मन यात्री भी साथ थे) में संक्षेप से बताती रही। सम्पूर्ण नगर की एक झाँकी हमें मिल गई। श्रीमती वागो निरन्तर साथ रहीं।

बुदापैश्त मूल में दो अलग-अलग नगर थे। एक का नाम था बुदा और दूसरे का पैश्त। बुदा अधिकांश पहाड़ियों पर बसा है और प्राकृतिक दृष्टि से अति रमणीय है, और पैश्त मैदानी क्षेत्र पर। बुदा और पैश्त के बीच में दूना (अंग्रेज़ी नाम डेन्यूब) नाम की एक विशाल नदी बहती है। वही दोनों की विभाजक रेखा है। उस पर अनेक पुल बने हैं जिन पर से एक दूसरे में आना-जाना होता है। कालान्तर में दोनों नगरों को मिलाकर प्रशासनिक दृष्टि से एक कर दिया गया और दोनों का नाम मिलाकर बुदापैश्त (अंग्रेज़ी नाम बुडापैस्त) रख दिया गया।

पैश्त के भाग की ओर, नदी से कुछ ही दूर, हंगरी का विशाल एवं भव्य लोकसभा भवन है जिसकी शोभा देखते ही बनती है। पैश्त की ओर एक प्राचीन दुर्ग एवं गिर्जाघर हैं। दुर्ग में कुछ नौकादार बुर्जियाँ-सी बनी हैं। हमें बताया गया कि पहले समय में यायावर लोग जहाँ जाते थे वहाँ तम्बू डाल देते थे। ये बुर्जियाँ उन्हीं तम्बुओं के आकार पर बनाई गई हैं। पुराने गिर्जाघर के ठीक सामने एक अत्यन्त नया एवं अत्याधुनिक, समस्त योरुप में अपने ढंग का अनूठा, हिल्टन नाम का होटल है। प्राचीन भग्नावशेषों, दीवारों, स्तम्भों आदि पर वह बना है पर उन भग्नावशेषों को तदवस्थ रहने दिया गया है। हंगरी के शिल्पियों का यह कमाल है कि समस्त भवन में बीच-बीच में उन्होंने उन्हें इस तरह रखा है कि वे अक्सर दीख़ जाते हैं। सारे भवन में उन्हें ओतप्रोत कर दिया गया है। एक तरह से उन्हें भी साजसज्जा के काम में अत्यन्त अद्‌भुत ढंग से ले लिया गया है।

पैश्त में हमने वह चौक भी देखा, जिसके एक ओर अद्‌भुतालय है और दूसरी ओर हंगरी के भूतपूर्व शासकों की लौह प्रतिमाओं की शृंखला।

तीसरे दिन, 25-7-1977 को, हम सांस्कृतिक सम्बन्ध संस्थान, इन्स्टिट्यूट आफ़ कल्चर (जिसके निमन्त्रण पर हम हंगरी गए थे) की उपाध्यक्षा कु. डा. वैरा गौथी से मिले। उन्होंने हमें प्रारम्भ से लेकर अब तक की हंगरी में भारतीय विद्या अध्ययन की प्रगति से अवगत कराया। लगभग दो घण्टे तक उनके साथ हमारा वार्तालाप चला, जिससे हमारा बहुत ज्ञान-वर्धन हुआ और हमें बहुत उपयोगी सामग्री मिली। डा. गौथी हमें एक अतीव प्रतिभाशालिनी एवं प्रबुद्ध महिला लगीं। उन्होंने एम. ए. अंग्रेज़ी में किया है। साथ ही संस्कृत और हिन्दी पढ़ी हैं। पी-एच. डी. का उनका विषय 'गान्धी जी द्वारा भारतीय स्वातन्त्र्य आन्दोलन' था। वे भारत में रह भी चुकी हैं और उसकी अधुनातम साहित्यिक प्रगति से सम्यक् अवगत हैं। उन्होंने भारतीय भाषाओं की कतिपय प्रतिनिधि कहानियों का हंगेरियन में एक संकलन भी प्रकाशित किया है।

उससे अगले दिन, 26-7-1977, को हम हंगेरियन एकेडमी ऑफ़ साइंसिज़ में गए। वहाँ के पुस्कालय में डा. घूला वॉयतिला नाम के एक सज्जन से हमारी भेंट हुई। वे संस्कृत के एक अच्छे विद्वान् हैं। उन्होंने बुदापैश्त में रहकर ही अपना अध्ययन पूर्ण किया है। सन् 1971 में उन्होंने 'दशकुमारचरित में प्रतिबिम्बित राजनैतिक मान्यताएँ' विषय पर पी-एच. डी. की थी और उसी वर्ष पुस्तकालय में कार्य प्रारम्भ कर दिया था। सन् 1975 और 1977 में वे भारत आए थे। बर्लिन, मास्को तथा यूरोप के अनेक देशों में नाना अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में उन्होंने भाग लिया है। उन्होंने सुप्रसिद्ध काश्मीरी लेखक क्षेमेन्द्र की 'समयमातृका' का हंगेरियन भाषा में अनुवाद किया है। वे इसका एक प्रामाणिक संस्करण भी निकालना चाहते हैं। यह काव्यमाला एवं चौखम्भा ग्रन्थमाला में एक-एक बार प्रकाशित हो चुकी है पर अपूर्ण रूप में ही। कहीं भी सम्पूर्ण ग्रन्थ की पाण्डुलिपि उन्हें नहीं मिली। टीकाकार को भी अपूर्ण ही ग्रन्थ मिला था क्योंकि टीका अपूर्ण ग्रन्थ पर ही उपलब्ध है। डा. वॉयतिला इस अपूर्ण ग्रन्थ को ही भाषा विषयक व्याख्यात्मक टिप्पणियों के साथ प्रकाशित करने की दिशा में प्रयत्नशील हैं।

सम्प्रति वे 'प्राचीन भारत में कृषि विषयक पारिभाषिक शब्दावली' पर कार्य कर रहे हैं। उन्हें अपने पुस्तकालय से 'कृषिस्तुति' नाम के कृषिशास्त्र के एक अद्भुत ग्रन्थ की पाण्डुलिपि मिली है जिसका वे अध्ययन कर रहे हैं। इसमें कृषि विषयक लगभग एक सहस्र उक्तियों का संकलन है। डा. वॉयतिला की अंग्रेज़ी अनुवाद, भूमिका और विस्तृत समीक्षण के साथ निकट भविष्य में इसे प्रकाशित करने की योजना है। अपने कृषि विषयक कार्य के प्रसंग में उन्होंने सन् 1960 में कलकत्ता से बिब्लियोथिका इण्डिका शीर्षक ग्रन्थमाला के अन्तर्गत प्रकाशित 'कृषिपराशर' का भी गम्भीर अध्ययन किया है।

डा. वॉयतिला ने हमें बताया कि उनके पुस्तकालय में चालीस सहस्र पुस्तकें हैं जिनमें से भारत से सम्बद्ध पुस्तकों की संख्या छः-सात सहस्र के लगभग होगी। इन छः-सात सहस्र में भी चार सहस्र के लगभग श्ताइन

संग्रह की हैं। श्री श्ताइन मूलतः हंगरी निवासी थे। उनके दो ग्रंथ-संग्रह थे, एक सरकारी और एक व्यक्तिगत। सरकारी संग्रह उन्होंने प्रशियाई सरकार के तत्वावधान में तुर्फ़ान में भेजे गए अभियान के प्रसंग में गोबी नामक मरुस्थल से प्राप्त किया था। चूंकि वह सरकार की सहायता से प्राप्त हुआ था इसलिए वह सरकार (प्रशिया) को दे दिया गया। उन दिनों जर्मनी पर प्रशियाई शासन था। वह आजकल जर्मन प्रजातान्त्रिक गणराज्य (जी. डी. आर) की राजधानी बर्लिन की एकेडमी ऑफ़ साइन्सिज़ में सुरक्षित है। अपना निजी ग्रन्थसंग्रह उन्होंने अपनी मातृभूमि हंगरी को दे दिया जो आजकल हंगेरियन एकेडमी ऑफ़ साइंसिज़ में सुरक्षित है और जिसे देखने का सौभाग्य इस यात्रा के दौरान हमें मिला।

27-7-1977 को हम हंगरी की सरकारी प्रकाशन संस्था 'ऐउरोपा' की अध्यक्षा डा. कॅरिन्त्सशारा से मिले। वयोवृद्ध उन महिला ने हमें दो-ढाई घण्टे के लगभग समय दिया और बहुत-सी अपेक्षित जानकारी दी। वे उस दिन अवकाश पर थीं, फिर भी हमारे लिए वे दफ़्तर आईं। उनका यह स्नेह कहीं हमें गहरे तक छू गया। आपका यहाँ आगमन हमारे लिए एक विशिष्ट घटना है (your visit here is an event for us.), मिलते ही कहे गए उनके इन शब्दों ने हमें अभिभूत कर दिया। उन्होंने जो जानकारी दी अधिकांश वही हम पहले डा. वैरा गौथी से प्राप्त कर चुके थे। पर फिर भी उनके मुख से उसे पाना बहुत भला लगा। जिस कमरे में हमारी भेंट हुई उसकी खिड़की से लोकसभा भवन दीखता था। 'ऐउरोपा' प्रकाशन संस्था और वह आमने-सामने ही हैं। बातचीत का श्रीगणेश करते ही वे परिहास में बोलीं जब भी हमें कोई समस्या होती है तो हम सामने से लोकसभा भवन को देख लेते हैं। उन्होंने बताया कि उनकी प्रकाशन संस्था द्वारा, रामायण-महाभारत के संकलनों, कालिदास के ग्रन्थों, पंचतन्त्र, हितोपदेश, दशकुमारचरित, गीतगोविन्द आदि अनेक ग्रन्थों की आठ-आठ, दस-दस हज़ार प्रतियाँ छपी हैं जो सभी-की-सभी बिक चुकी हैं। प्रकाशन साधनों के सीमित होने के कारण और अधिक प्रतियों का संस्करण प्रकाशित करना संभव नहीं हो सका है। हमें यह सब जानकर सुखद आश्चर्य हुआ था।

संस्कृत ग्रन्थों के अधिकांश हंगेरियन अनुवादों की यह विशेषता है कि उनमें मूल संस्कृत के पद्य को पद्य में और गद्य को गद्य में अनूदित किया गया है। पर इससे भी बढ़कर उनकी विशेषता है अनुवाद में भी मूल संस्कृत छन्दों को तदवस्थ रखना। यदि कालिदास ने उपजाति छन्द में लिखा है तो हंगेरियन अनुवाद भी उसी छन्द में है। यदि उसने मन्दाक्रान्ता छन्द में लिखा है तो हंगेरियन अनुवाद भी उसी छन्द में प्रस्तुत किया गया है। यह हमारे लिए एक बिल्कुल नई बात थी। संस्कृत ग्रन्थों के समस्त विश्व में किए गए अनुवाद के प्रयासों में यह सर्वथा अनूठा है। अनुवाद अंग्रेज़ी में भी हुए हैं, जर्मन में भी और अन्य भाषाओं में भी। पर उनमें विदेशी छन्दों का प्रयोग है—ओड, सानेट आदि अथवा मुक्तकों में रचना की गई है। पर यहाँ ऐसा अनुवाद है जिसमें मूल संस्कृत छन्द हैं। हंगरी के अनुवादकों ने अपनी भाषा को तदनुसार ढाल दिया है।

स्थालीपुलाक न्याय से कतिपय उदाहरण नीचे प्रस्तुत किए जा रहे हैं—

कालिदास के मेघदूत का प्रथम श्लोक—

कश्चित्कान्ताविरहगुरुणा स्वाधिकारात्प्रमत्तः
शापेनास्तङ्गमितमहिमा वर्षभोग्येण भर्तुः।
यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु
स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु।।

हंगेरियन अनुवाद—

पारयातोल एद्द्य हॉन्यॉगुल उद्यैलो यक्षा-तुन्देर्त
एलउज़ोत एश एद्द्य ऐस्तैन्दौरै एल इश एतेल्व ज़ोर्द उरानॉक पॉरॉन्चा।
एलमैन्त हात, होद्द्य ऑ रैमैतै-तॉन्यान, सेप सीता
सैन्त वीज़ेनेल लोम्बतोल हूश रामॉगिरी तैतैयेन ब्युनतैतेशेत लैतल्तचै।

कालिदास के कुमारसम्भव का प्रथम श्लोक—

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा
हिमालयो नाम नगाधिराजः।

पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य
स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः।।

हंगेरियन अनुवाद –

एद्‌य इश्तैन-ऑर्त्सु हैद्‌यैत ओरिज़ एसॉक,
हिमालॉयात, ऑ हैद्‌यैक ओश किराययात।
केतु ओत्सियान कज़्त, कैलैत एश न्यूगॉत कज़्त
तोरोन्यलिक एगनैक फैयैदैल्मी ओरमा।

गीतगोविन्द (अष्ट पदी 3, पद्य 1)–

ललितलवङ्गलतापरिशीलनकोमलमलयसमीरे
मधुकरनिकरकरम्बितकोकिलकूजितकुञ्जकुटीरे।
विहरति हरिरिह सरसवसन्ते
नृत्यति युवतिजनेन समं सखि विरहिजनेन दुरन्ते।।

हंगेरियन अनुवाद–

सैकफ़्यु विराग लैहैलैत जुहॉ तॉगोश–अरम इल्लॉतु देलवी सेलबैन
ष्युलैमिलैसॉवु कुसॉ मेहज़ीजैगेशु लुगॉश शुशीगो शुरुयेबैन
हॉरी बिगॉद औ द्‌यनअरु दॉलु किकैलैतबैन,
शीरयन ऑज़ एलहॉद्‌यॉतोत्त, इमै तान्सोल ऑ वॉदअरअमु लान्य
कॉशैरैग बैन।

शुद्ध अनुवाद तैयार कराने के लिए अधिकारियों की ओर से भरसक प्रयत्न किया जाता है। सबसे पहले एक अनुवादक को अनुवाद करने के लिए ग्रन्थ दिया जाता है। वह अनुवाद का प्रारूप तैयार करता है। तदन्तर एक अनुवादक मण्डल शब्दशः उस पर विचार करता है। उसके द्वारा जो अनुवाद स्वीकृत होता है उसे हंगेरियन साहित्य की तत्तद्‌विधा के मूर्धन्य लेखक को विधा की दृष्टि से समीक्षार्थ भेजा जाता है। उसके द्वारा जो स्वरूप उसका निर्धारित होता है वह प्रकाश में लाया जाता है। इस पद्धति से एक सीढ़ी से दूसरी सीढ़ी तक अनुवाद का परिष्कार होता जाता है।

वह शुद्ध एवं प्रासंगिक होने के साथ-साथ विधा की दृष्टि से भी मँज जाता है और सहृदय पाठकों को रसास्वादन कराने में सक्षम हो जाता है। ग्रन्थ में मुखपृष्ठ के पीछे प्रारम्भिक अनुवादक से लेकर साहित्य की तत्तद्विधा के विद्वान् तक के हरेक व्यक्ति का नाम छपा रहता है। एक आदर्श अनुवाद तैयार कराने के लिए इससे अधिक प्रयास और क्या किया जा सकता है!

संस्कृत ग्रन्थों के हंगेरियन अनुवादों के अतिरिक्त 'ऐउरोपा' प्रकाशन संस्था ने आधुनिक लेखकों की प्रतिनिधि कृतियों के संकलन भी प्रकाशित किए हैं। उन लेखकों की कृतियों के मूल अथवा अंग्रेज़ी अनुवाद से हंगेरियन अनुवाद किया गया है। हिन्दी कृतियों का अनुवाद हिन्दी से हुआ है। जिन लेखकों की कृतियों का अनुवाद हुआ है उनमें विशेष उल्लेखनीय हैं श्री मुल्खराज आनन्द, श्री खुशवन्तसिंह, श्री गिरीश कर्णाड, श्री मोहन राकेश। निकट भविष्य में श्री बंकिमचन्द्र की 'पाथेर पांचाली', श्री मणि बैनर्जी की 'पपेट टेल्ज़', श्री मूलगाँवकर की 'कम्बैट ऑफ शैडो', मुंशी प्रेमचन्द की 'निर्मला' आदि ग्रन्थों के अनुवाद प्रकाशित करने की संस्था की योजना है। श्री जवाहरलाल नेहरू की 'डिस्कवरी ऑफ़ इण्डिया' के अनुवाद का कार्य भी चल रहा है। अनुवाद कर रही हैं डा. वैरा गौथी।

28-7-1977 को हम भारतीय दूतावास में गए जोकि बुदा क्षेत्र में है। एक ऊँची-सी पहाड़ी पर वह बना है जिससे इसकी शोभा देखते ही बनती है। वहाँ काउंसलर श्री सेन से हम मिले। उनके लिए हंगरी से पूर्व की वार्सा की यात्रा के समय वहाँ के प्रसिद्ध विद्वान् प्रो. बिस्कीं ने हमें पत्र भी दिया था। श्री सेन बुदापैश्त नियुक्ति से पूर्व वार्सा में थे जहाँ प्रो. बिस्कीं से उनकी बहुत घनिष्ठता हो गई थी। इसके पश्चात् हम राजदूत श्री ए. के. दास से मिले। जब हमने उनसे चर्चा की कि हमने 'मुसलमानों की संस्कृत को देन' विषय पर नई दिल्ली में भाषण दिया था जिसकी अध्यक्षता तत्कालीन कार्यवाहक राष्ट्रपति श्री बी. डी. जत्ती ने की थी तो उन्होंने बहुत रुचि इस विषय में दिखाई और कुछ अधिक जानकारी इस बारे में दी। उन्होंने बताया कि बंगाल के एक मुसलमान ने वेदों का अनुवाद बंगाली भाषा में किया है। तीन खण्ड इसके प्रकाशित भी हो चुके

हैं जो कलकत्ता से उपलब्ध हो सकते हैं। उन्होंने यह भी बताया कि शहीदुल्ला नामक एक सज्जन कलकत्ता विश्वविद्यालय में संस्कृत पढ़ना चाहते थे। वहाँ के संकीर्ण विचारों के पण्डितों ने इसका विरोध किया और उन्हें प्रवेश नहीं दिया। श्री शहीदुल्ला ने इस पर विश्वविद्यालय से संघर्ष किया जिसमें उन्हें विजय मिली। उन्होंने संस्कृत पढ़ी और उसी में एम. ए. की। बाद में वे ढाका विश्वविद्यालय में संस्कृत के प्राध्यापक नियुक्त हुए। इतने प्रबुद्ध एवं व्यापक जानकारी रखने वाले राजदूत से मिलकर हमें बहुत प्रसन्नता हुई।

उसी दिन, 28-7-1977 को, बुदापैश्त विश्वविद्यालय की चोमा द करश सोसाइटी के तत्वावधान में 'प्राचीन भारतीय चिन्तन में काल का स्वरूप' विषय पर मेरा भाषण था। सीधे दूतावास से हम वहाँ पहुँचे। वहीं भेंट हुई थी विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास विभाग की श्रीमती इल्दिको पुश्काश से। तीन विषय में वे एम. ए. हैं। भारतीय विद्या, प्राचीन ग्रीक और रूसी भाषा। 'बुद्धपूर्वकालीन भारत के सामाजिक इतिहास' विषय पर उन्होंने अभी-अभी पी-एच. डी. की है। कुछ शोध-लेख उन्होंने प्रकाशित किए हैं। उनका विशेष उल्लेखनीय कार्य है रूसी विद्वानों के. ए. एन्तानोवा, जे. एन्. बोन्गार्ड लेविन तथा जी. पी. कोतोव्स्की द्वारा रचित 'भारत का इतिहास' ग्रन्थ का इश्तवान मौयोर के साथ संयुक्त रूप से अनुवाद।

बुदापैश्त में हमारी भेंट श्रीमती एवा ऐरॉदी नाम की एक अत्यन्त प्रतिभाशालिनी महिला से भी हुई जो अनेक वर्ष भारत में रह चुकी थीं और हिन्दी बहुत अच्छी जानती थीं। वे बुदापैश्त विश्वविद्यालय में हिंदी की प्राध्यापिका हैं। उन्होंने डा. धर्मवीर भारती की 15 कहानियों का हंगेरियन में अनुवाद किया है जो शीघ्र ही प्रकाशित होने जा रहा है। उन्होंने श्री कमलेश्वर की 'मांस का दरिया' कहानी का हंगेरियन में नाट्यरूपान्तर किया है जोकि मई, 1977 में हंगेरियन आकाशवाणी से प्रसारित भी हुआ था। उन्होंने मुंशी प्रेमचन्द की 'निर्मला' का हंगेरियन अनुवाद भी किया है। हंगरी में हिन्दी पढ़ाने वाली वे दूसरी प्राध्यापिका हैं।

डा. एवा ऐरॉदी की नियुक्ति सन् 1975 में हुई थी। वे हंगेरियन भाषा में कविता भी लिखती हैं।

जिन दिनों हम बुद्रापैश्त पहुँचे उन दिनों विश्वविद्यालय में अवकाश चल रहे थे। इसलिए कुछ विद्वानों से भेंट न हो सकी। विश्वविद्यालय के प्राच्यविद्या विभाग के अध्यक्ष ईरानविषयविशेषज्ञ, लब्धप्रतिष्ठ विद्वान् प्रो. हॉरमॉत्ता बाहर थे। शुकसप्तति के यशस्वी समीक्षक संस्कृताध्यापक प्रो. ततशी चौबा भी बुदापैश्त में नहीं थे। पर उनसे विश्व संस्कृत सम्मेलन के प्रसंग से पेरिस में भेंट हो चुकी थी। हंगेरियन एकेडमी आफ साइन्सिज़ के प्रो. योझैफ़ वैकैर्दी हंगरी में ही कहीं थे पर बुदापैश्त में नहीं। जिस दिन हमने प्रस्थान करना था उस दिन वे आ गए थे पर तब भेंट सम्भव नहीं थी। उनसे न मिल पाने का वस्तुतः हमें दुःख रहेगा। हंगरी में वे इस समय सबसे बड़े संस्कृत-विद्वान् हैं। उन्होंने ही रामायण और महाभारत के संकलन का हंगेरियन अनुवाद किया है। भगवद्गीता का अनुवाद वे कर चुके हैं। सम्प्रति महाभारत का अनुवाद करने में लगे हैं। बहुत वर्ष पूर्व श्री शान्दोर वरश ने गीतगोविन्द के कतिपय मूल श्लोकों के विषय में पता करना था। पुस्तक उनके पास नहीं थी। उन्होंने दूरभाष पर श्री वैकैर्दी से सम्पर्क किया। मूल उनके पास भी उस समय नहीं था। उन्होंने अपने अनुवाद के आधार पर सारे श्लोकों की पहली पंक्ति बता दी थी। और यह तब था जबकि उनका अनुवाद अनेक वर्ष पूर्व प्रकाशित हो चुका था।

बुदापैश्त से प्रस्थान करने में अब हमारे केवल दो ही दिन, शुक्र और शनिवार, जुलाई 29 और 30, शेष रहे थे। 31 को हमें चल देना था। जिन-जिनसे हमने मिलना था उन-उनसे हम मिल लिए थे। सो सोचा कि हंगरी के दो तीन महत्त्वपूर्ण स्थान ही देख लिए जाएँ। तदनुसार हम शुक्रवार, 29-7-1977, को बुदापैश्त से 20 किलोमीटर दूर सुप्रसिद्ध सैन्तैन्द्रै नामक स्थान को देखने के लिए गए। वहाँ के रास्ते में ही हमने वह स्थान भी देखा जहाँ हंगरी के पुराने देहाती घरों को आज के नागरिक को उनका स्वरूप बताने हेतु प्रदर्शन के लिए रखा गया है। कच्चे घर, छाज, चरखा आदि सब चीज़ें हमें वहाँ दिखाई दीं। बीसवीं सदी के प्रारम्भ

में हंगरी के किसानों का रहन-सहन किस प्रकार का था, उसकी एक झाँकी हमें वहाँ मिली। हमें यह देख आश्चर्य हुआ कि भारत के और उस समय के हंगरी के किसान के रहन-सहन में बहुत समानता थी। घरों के पास ही बड़े-बड़े चौपाल थे जिनमें पशुओं के लिए चारा व जाड़े के दिनों के लिए लकड़ी का संग्रह था। यह सब देख बहुत भला लगा।

हम अभी उस स्थान को देख ही रहे थे कि एक विचित्र घटना घटी। एक लड़की आगे बढ़ी और मेरी धर्मपत्नी से बोली आप श्रीमती शास्त्री हैं? धर्मपत्नी एक अपरिचित व्यक्ति के मुख से अपना नाम सुन विस्मित हुईं। अन्य दर्शकों की तरह वह लड़की भी अपने माता-पिता के साथ (जो कुछ दूर एक वृक्ष के नीचे विश्राम कर रहे थे) उन घरों को देखने आई थी। बातचीत के प्रसंग में उसने बताया कि हम एक भारतीय के यहाँ भोजन के लिए जाने वाले थे। जिनके यहाँ हमें जाना था वे उसके भी परिचित हैं। भारत से एक दम्पती आ रहे हैं, यह जान वह समय पर वहाँ पहुँच गई थी पर हमारे न जाने से उसे निराशा हुई थी। आज जब हमें देखा तो उसके षष्ठेन्द्रिय ने कहा कि हो-न-हो ये वही हैं और इसलिए वह पूछ बैठी। बात यह हुई थी कि एक भारतीय गृहिणी ने हमें अपने यहाँ भोजनार्थ निमन्त्रित किया था। हमने उनके निमन्त्रण को स्वीकार भी कर लिया था पर जिस दिन जाना था उस दिन धर्मपत्नी अस्वस्थ हो गई थीं। किंच उनका घर बुदा की ओर पड़ता था। हम थे पैश्त की ओर। बिना किसी की सहायता के पहुँचना कठिन था—भाषा की कठिनाई। हमारी गाइड श्रीमती वागो भी अस्वस्थ थीं। इसलिए उनका साथ जाना भी सम्भव नहीं था। अकेले हम पहुँच नहीं सकते थे। इन कारणों से ऐन मौके पर हमें न पहुँच पाने की सूचना उन्हें देनी पड़ी। लड़की, शिमोन नोरा, हमें मिलने की उत्सुकता से उनके घर पहुँची थी, पर निराश हो लौट गई थी। वही हमें संयोगवश उस दिन मिल गई थी। वह हमें अपने माता-पिता के पास ले गई। वे अंग्रेज़ी नहीं जानते थे। उनकी लड़की ही हमारे और उनके बीच दुभाषिये का काम करती रही। अल्पायु में ही उसकी इस प्रकार की क्षमता ने हमें चकित कर दिया। वह किसी भारतीय के सम्पर्क

में पहले आ चुकी थी। उससे हिन्दी उसने सीखी थी। सम्प्रति वह संगीत का अभ्यास कर रही है। भारतीय शास्त्रीय संगीत में उसकी गहरी रुचि है। भारत में आकर वह उसे सीखना चाहती है। भारत के लिए उसके मन में अपार लगाव है। कु. नोरा एवं उसके माता-पिता से हमने थोड़ी देर की बातचीत के बाद बिदा ली और कुछ ही समय में सैन्तैन्द्रै पहुँच गए।

सैन्तैन्द्रै दूना नदी (अंग्रेज़ी नाम डेन्यूब) के मोड़ के दाहिनी ओर बसा हुआ 11000 की आबादी का एक छोटा सा नगर है। प्राचीनकाल में इसका नाम उल्किसिया कैश्त्रा था। तुर्कों के आक्रमण से भागकर आए हुए सर्बिया और ग्रीस के शरणार्थियों ने इसमें शरण ली थी और इसे अपनी बस्ती बना लिया था। इसके आस-पास के क्षेत्र में प्रागैतिहासिक काल के पन्द्रह से पच्चीस सहस्र वर्षों तक के अवशेष पाए गए हैं। इसकी कोशुथ लॉयोश गली में एक गिर्जाघर है जो सन् 1759 से 1763 के बीच बना था। एक सीढ़ी के द्वारा तेम्प्लोन् दोमु, गिरिजाघर पहाड़ी कहलाने वाली, पहाड़ी पर बने तेरहवीं शताब्दी के नगर के सबसे पुराने गिर्जाघर में पहुँचा जा सकता है। नगर में यत्र-तत्र संकरी गलियाँ और पुरानी शैली के बने मकान दीख जाते हैं। आधुनिकता में पला हंगरी का नागरिक उन्हें बहुत कुतूहल और उमंग से देखता है और बाहर से आने वालों को दिखाता है। उसकी आँखों की चमक यह बात चुपके से किसी भी बाहरी व्यक्ति को बता जाती है कि आधुनिक परिवेश में रहने पर भी वह अपने अतीत से कितना जुड़ा है।

उपर्युक्त प्राचीनतम गिर्जाघर के पास ही शोबल नाम का एक अद्भुतालय है, जिसमें बीसवीं शताब्दी के एक कलाकार की कलाकृतियाँ सजी हैं। मिट्टी से बनी विभिन्न मुद्राओं की उन कृतियों की सुषमा देखते ही बनती है। हमारी सहायिका श्रीमती वागो ने हंगेरियन भाषा में लिखे हर मूर्ति-विवरण का अंग्रेज़ी में अनुवाद कर हमें उसके स्वरूप और विषय-वस्तु से परिचय कराया जिससे हम उनका आनन्द लेने में पूरी तरह समर्थ हो सकें।

रास्ते में एक स्थान पर सौफ़्टी आइसक्रीम बिक रही थी। श्रीमती वागो और मेरी धर्मपत्नी उसे लेने को रुकीं। वहाँ इसके लिए लाइन लगती है। श्रीमती वागो लाइन में लगीं। अपनी बारी पर उन्होंने दो आइसक्रीम खरीदीं। बेचने वाले ने पूछा दूसरी किसके लिए है। श्रीमती वागो ने पास में खड़ी मेरी धर्मपत्नी की ओर इशारा कर दिया। बेचने वाले ने एक आइसक्रीम उसके हाथ में थमाई और बोला दूसरी अपने हाथ से उन्हें दूँगा। वे भारत से आई हैं। हंगरी के लोगों का भारत के प्रति प्रेम कहीं गहरे तक छू जाता है।

सैन्तैन्द्रे के सब दर्शनीय स्थानों को देखते सन्ध्या हो आई थी। लौटने का समय हो गया था। हमने भरे दिल से उस छोटे से सुन्दर नगर से विदा ली और शीघ्र ही होटल लौट आए।

दूसरे दिन, 30-7-1977,—और यह हमारा हंगरी प्रवास का अन्तिम दिन था—हम विश्वप्रसिद्ध बॉलॉतोन झील देखने गए। यह बुदापैश्त से लगभग 150 किलोमीटर दूर है। साथ में अन्य दिनों की तरह थीं श्रीमती वागो। दो घण्टे में हम वहाँ थे। विशाल समुद्र की तरह दूर-दूर तक फैली हुई अपार जलराशि। बीच में कहीं इक्की-दुक्की नाव। जल में एक ठहराव। एक अजीब-सी शान्ति, एक अवर्णनीय सुख मिला उसे देखकर। एक पहाड़ी-सी पर बना एक गिर्जाघर था। उसे भी हमने देखा। फिर पहाड़ी की ऊँचाई से झील का साक्षात्कार किया। हमने पाया कि झील का जल थोड़ी-थोड़ी देर में अपना रंग बदलता है। अभी हरा है, तो अभी पीला हो जाएगा, अभी पीला है तो अभी जामुनी हो जाएगा। अलग-अलग दिशाओं में अलग-अलग रंगों के जल के भाग सतरंगे इन्द्रधनुष की-सी आभा बिखेर रहे थे। हम बहुत देर तक उस प्रकृति के एक विचित्र आश्चर्य को आँखों में भरते रहे।

हमने सुन रखा था कि गुरुदेव टैगोर भी हंगरी में आए थे। उन्हें हृदयरोग था। बॉलॉतोन का यह जल लाभकारी होता है, इसलिए उसके पास वे कुछ समय रहे थे। उससे उन्हें स्वास्थ्य-लाभ हुआ था। अपने एक आलेख में उन्होंने इसका उल्लेख किया है और इसके जल की गुणवत्ता एवंच इसके अलौकिक सौन्दर्य के विषय में अपने मनोभाव प्रकट किए

हैं। उन्हीं की हस्तलिपि में लिखा वह आलेख, जिसकी छाया-प्रतिलिपि सामने के पृष्ठ पर दी जा रही है, हिन्दी अनुवाद में इस प्रकार है—मैंने लगभग विश्व के सभी देशों को देखा है पर मैंने कहीं भी आकाश और जल का इतना सामंजस्य नहीं देखा जितना कि उसके सुखद अनुभव प्राप्त करने का सुअवसर मुझे बॉलॉतोन फ़्यूरेद के तट पर मिला जिसने मुझे आत्मविभोर कर दिया।

यद्यपि ऋतु बढ़ चुकी थी (जाड़े की ओर अग्रसर हो चुकी थी)—वह अक्तूबर का महीना था—मैं अपने छज्जे पर बैठ जाता था और घण्टों वहाँ काम करता रहता था। झरनों के कार्बन तथा खनिज लवणयुक्त जल ने मेरा स्वास्थ्य मुझे वापस ला दिया, पुनः ला दी मुझमें स्फूर्ति और दूर कर दी मेरी थकान।

मुझे इसका दुःख है कि संसार को इसके बारे में बहुत कम जानकारी है। उसने कभी स्वप्न में भी कल्पना नहीं की कि इस तरह के मूल्य योरुप में हो सकते हैं। इस दृष्टि से मेरे लिए बुदापैश्त तथा बॉलॉतोन झील के हृदयस्पर्शी सौन्दर्य को निहारना एक नया अनुभव था।

रवीन्द्र नाथ टैगोर

गुरुदेव के अपने देश में आगमन एवं निवास की चर्चा हंगरी निवासी बड़े गर्व से करते हैं। हमने सुना था कि उन्होंने अपने हाथ से एक पौधा लगाया था। उसे देखने की हमें बहुत उत्सुकता थी। श्रीमती वागो हमारे अनुरोध पर हमें वहाँ ले गई। पौधा अब वृक्ष का रूप धारण कर चुका है। उसी के नीचे गुरुदेव की एक प्रतिमा स्थापित की गई है। उसके सामने जो सड़क चली गई है उसका नाम गुरुदेव के नाम पर रखा गया है—टैगोर शेतान्य, टैगोर गली। गुरुदेव की प्रतिमा के दोनों ओर एक-एक पत्थर लगा है[1]। एक पर अंग्रेजी में उनकी लिखी पंक्तियाँ खुदी हैं और दूसरे पर खुदा है उनका हंगेरियन अनुवाद। वे पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

---

1. इन पत्थरों के चित्र साथ के पृष्ठों में दिए जा रहे हैं।



बॉलॉतोन झील का एक दृश्य

I have seen almost all countries of the world but I saw nowhere such a beautiful harmony of the sky and the water than that I had the privilege to enjoy on the shore of Balatonfüred filling my soul with rapture.

In spite of the advanced season – it was the end of October – I was able to sit on my balcony and to work there for hours, ~~and to work there for~~ hours. The carbonic mineral springs gave me back my health, my energy and put an end to my exhaustion.

I am sorry to say that the World at large knows but very little of Hungary and never dreamt of such values in this part of Europe. It was therefore a revelation to me ~~to me~~ to see the enchanting scenery of Budapest and Lake Balaton.

Rabindranath Tagore

बॉलॉतोन झील के बारे में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के उद्गार उनके अपने हस्तलेख में



गुरुदेव द्वारा रोपा गया वृक्ष। उसके आगे है गुरुदेव की वक्षःस्थल तक की प्रतिमा

A FAÜLTETÉS EMLÉKÉRE
AZ ALÁBBI VERSET IRTA
A VENDÉGKÖNYVBE.

When I am no longer	Ha nem vagyok többé
on this earth, my tree,	a földön, ó fám,
Let the ever-renewed	Susogtasd fávásszal
leaves of thy spring,	megújuló leveleid
to the wayfahrer:	Az erre vándorlók felett:
while he lived."	"A költö szeretett mig élt."

8. November 1926.
DRANATH TAGORE.

बॉलॉतोन झील के पास अपने द्वारा रोपे गए वृक्ष को गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर का सम्बोधन

When I am no longer on the earth, my tree
Get the ever and renewed leaves of thy spring
Murmur to the wayfarer
The poet did love while he lived.

Rabindranath Tagore,
8th November, 1926.

जब मैं इस पृथ्वी पर नहीं रहूँगा तो मेरे वृक्ष!
तुम्हारे स्रोत के सदा वे नए उगने वाले पत्ते
फुसफुसाकर यात्री से कह दें
कि कवि जब तक जिया उसने प्रेम किया।।

रवीन्द्रनाथ टैगोर
8 नवम्बर, 1926

हमारे लिए उस वृक्ष के दर्शन देवता के दर्शन के समान थे। कवि ने अपने हाथों उसे रोपा था। बार-बार उसके पत्तों को हमने माथे से लगाया। कुछ क्षणों के लिए तो मेरे लिए अपने आवेग को रोकना कठिन हो गया था।

उसी पवित्र वृक्ष के पास हंगरी में आने वाले अनेक विशिष्ट भारतीयों ने पौधे लगाये। डा. ज़ाकिर हुसैन ने 9 जून, 1977 को, श्री वी. वी. गिरि ने 6 अक्टूबर, 1970 को, श्रीमती इन्दिरा गान्धी ने 22 जून, 1972 को तथा श्री फ़खरुद्दीन अली अहमद ने 29 सितम्बर, 1975 को। इतने पेड़-पौधे लग जाने से वहाँ एक झुरमुट-सा बन गया है जिसे भारतीय झुरमुट कहा जा सकता है।

गुरुदेव की प्रतिमा से कुछ ही दूर कुछ स्टालनुमा दुकानें लगी हुई थीं। उनमें से एक में शीतल एवं उष्ण पेय (काफ़ी) बिक रहा था। लाइन लगी थी। मेरी धर्मपत्नी व श्रीमती वागो लाइन में लग गईं। मेरी धर्मपत्नी के आगे चेकोस्लोवाकिया से आया एक सज्जन था। उसने काफ़ी का प्याला लिया और विक्रेता से मेरी धर्मपत्नी की ओर इशारा कर बोला

इन्होंने जो लेना हो दे दो, पैसे इनके मैं दूँगा। ये भारतीय हैं। श्री युग हाफ़मैन बोलोनिन नाम का वह व्यक्ति चेकोस्लोवाकिया से सपरिवार भ्रमणार्थ हंगरी आया हुआ था।

शीतल पेय लेकर हम झील के दूसरी ओर चले गए। एक अलग से स्थान पर मेरी धर्मपत्नी ने स्नान किया। श्रीमती वागो उसके लिए ड्रेस लाई हुई थीं। वहीं म्यूनिख से आई कुछ जर्मन महिलाएँ भी स्नान कर रही थीं। उन्होंने उसे हाथ पकड़ कर तैरना सिखाया। स्नानोपरान्त हमने भोजन किया। झील के किनारे-किनारे अनेक स्थानों पर पेड़ के तनों को काटकर और उन्हें बीच से चीरकर आधे भाग को टेबुल की तरह जमा दिया गया है। तने के कुछ भाग को ज़मीन में गाड़कर बैठने के स्टूल के काम में लाया गया है। श्रीमती वागो हमारे लिए बहुत प्रेम से भोजन बनाकर लाई थीं। अपनी ओर से उन्होंने खीर बनाने का भी प्रयास किया था।

बॉलॉतोन झील देखकर हम वापस लौट आए। जहाँ कहीं भी हम गए, वाहन का प्रबन्ध हमारे लिए सांस्कृतिक सम्बन्ध संस्थान की ओर से किया गया।

इससे अगले दिन, 31-7-1977, को हमने बुदापैश्त से विदा ली और भारत जाने की दिशा के प्रथम चरण के रूप में रोम में जा पहुँचे। वहाँ से 3 अगस्त को हमने भारत के लिए प्रस्थान कर दिया।

(2)

1994

वर्ष 1994 के अप्रैल मास के अन्त में इटली के टोरीनो नगर में दस दिन के लिए आने का हमें निमंत्रण था। जब हम भारत में ही थे तभी हमने वहाँ से हंगरी जाने की योजना बना ली थी जिसकी व्यवस्था नई दिल्ली स्थित हंगेरियन सांस्कृतिक एवं सूचना केन्द्र के तत्कालीन निदेशक डा॰ इमरै लॉज़ार ने कर दी थी। हमारी यात्रा के प्रारम्भ होने तक डा. लॉज़ार का नई दिल्ली का कार्यकाल समाप्त हो चुका था और वे बुदापैश्त लौट चुके थे। वे हमारे हंगरी के अन्तरंग मित्रों में से थे।

टोरीनो की यात्रा समाप्तकर हम लुफ़्तहंसा फ़्लाइट से प्रस्थानकर 7. 5.1994 को मध्याह्न में 12.00 बजे बुदापैश्त पहुँचे। हवाई अड्डे पहुँचने में फ़्रैंकफ़र्ट पर ही वायुयान में तकनीकी खराबी आ जाने के कारण एक घण्टे का विलम्ब हुआ।

बुदापैश्त में हवाई अड्डे के आप्रवास क्षेत्र से बाहर आने पर हमने आँखें डा. लॉज़ार की तलाश में इधर-उधर दौड़ाईं। उन्होंने हमारी अगवानी करनी थी। अचानक एक काग़ज़ पर लिखे 'शास्त्री' इस शब्द पर हमारी दृष्टि पड़ी। वहाँ एक बड़ी उम्र की महिला उसे लिए हुए थी। में उनके पास आया और उन्होंने बहुत ही स्नेह और आत्मीयता से मेरा तथा मेरी पत्नी का स्वागत किया। एक छोटी बस में वे हमें एक अतिथिगृह में ले गईं, जहाँ हमारे लिए एक अपार्टमेण्ट की व्यवस्था की हुई थी। अगले दस दिन हमें वहीं रहना था।

अतिथिगृह बुदा में है जो दूना (डेन्यूब) नदी के उस पार है। कभी बुदा और पैश्त दो अलग-अलग शहर थे। एक नदी के एक ओर दूसरा नदी के दूसरी ओर। अब दोनों को मिलाकर एक कर दिया गया है जोकि दोनों के संयुक्त नाम से जाना जाता है—बुदापैश्त। पैश्त मैदानी भाग में है और बुदा पहाड़ी में। डेन्यूब पर अनेक पुल हैं जिन पर से एक से दूसरे में आना-जाना होता है। बाजार, व्यावसायिक प्रतिष्ठान आदि अधिकांश पैश्त में हैं।

हवाई अड्डे से बाहर की ओर आते समय बड़ी उम्र की महिला ने अपना नाम यूडित पोल्गार बताते हुए हमें सूचित किया था कि वे संस्कृति मन्त्रालय में दुभाषिये का काम करती हैं।

आते समय अनेक महत्त्वपूर्ण स्थानों को उन्होंने दिखाया था। जब मैंने उन्हें बताया कि हम टोरीनो से आ रहे हैं तो उसने बताया कि उसके देश (हंगरी) के लॉयोश कोशुथ नाम के एक सुप्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी ने अपने देश-निकाले का कुछ समय वहीं बिताया था। इसलिए उस शहर का उसके देशवासियों के हृदय में विशेष स्थान है। इसी सन्दर्भ में उन्होंने एक अन्य महत्त्वपूर्ण व्यक्ति का उल्लेख किया। एक बाग में लगी उसकी प्रतिमा को हमें दिखाते हुए उसने कहा कि यद्यपि कोशुथ और सेचेन्य इश्तवान इन दोनों का लक्ष्य एक ही था, तो भी उनमें मतभेद था। इस मतभेद के बावजूद उनमें अच्छी मित्रता थी। हंगरी में वर्तमान में 900 फोरिन्त के नोटों पर कोशुथ का चित्र है और 5000 के नोटों पर सेचेन्य इश्तवान का।

हंगरी में दो प्रमुख स्वतंन्त्रता सेनानी हुए हैं, सेचेन्य इश्तवान जिसने अपने देश को आस्ट्रिया की दासता से मुक्त कराने के लिए संघर्ष किया और दूसरा पूर्वोल्लिखित लॉयोश कोशुथ जिसने हॉप्सबुर्ग शासकों से अपने देश को मुक्त कराने का भरसक प्रयास किया। जब कोशुथ ने अपने देशवासियों का स्वतन्त्रता के लिए आह्वान किया तो उन्होंने अपने-अपने आभूषण उतारकर उसे सौंप दिए थे। उसके स्वातंत्र्य आन्दोलन के नेताओं में शान्दोर पेतोफ़्री नाम के एक व्यक्ति थे, जो कि हंगरी के मूर्धन्य

कवि थे। उन्होंने अपने को स्वातन्त्र्य आन्दोलन की बलि चढ़ा दिया था। उनकी उम्र तब मात्र 26 वर्ष की थी।

जब मैंने श्रीमती यूडित से पूछा कि क्यों हंगरी को स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करना पड़ा और क्या यह किसी के अधीन था, तो वे बोलीं कि यह एक के नहीं अनेक के अधीन था। कभी मंगोलों ने इसे रौंदा, तो कभी तुर्कों ने और कभी ऑस्ट्रिया ने। हंगरी के राष्ट्रगीत में ही इस पीड़ा का स्वर है। राष्ट्रगीत वही-का-वही रहा है, उसमें कोई परिवर्तन नहीं आया, साम्यवादियों के शासनकाल में भी नहीं। राष्ट्रगीत की कतिपय पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

प्रभो! हम हंगरी वासियों को
आनन्दोल्लास और भरपूर अनाज का आशीर्वाद देना
जब शत्रु हमें बहुत सताने लगें
तो हमें उनसे बचाना और हमारी रक्षा करना
बीते दिनों की आँधियों के बाद बना हमारे परिश्रम को सफल
अतीत के और भविष्य के हमारे पापों का
कर लिया है हमने सदा सदा के लिए प्रायश्चित्त
तुमने हमारे पूर्वजों को कारपाथियन पहाड़ियों की
ऊँची-ऊँची चोटियाँ कभी दी थीं
उसी तरह दी थी माननीय बैन्दैगुज़ के पुत्रों को
उनकी ज़मीनें और दिए थे उन्हें शरणस्थल
जहां तीसा की लहरें हिलारें लेती हैं
जहाँ दूना तेज़ी से बहती है
(जहाँ) आरपाद का बीज युगों से पनपता है
कुन्शाग के मैदानों में
तुमने भरपूर गेहूँ तरंगित किया
तोकौय की अंगूर की खेतियों में
तुमने भरपूर अमृत बरसाया
अनेक बार तुमने हमारे झण्डों को

हिंस्र तुर्कों के मीनारों पर फहराया
मात्याश की शक्ति के आगे
गर्वित वियाना को औंधे मुँह गिरवाया

मिनी बस में शहर की ओर जाते समय श्रीमती यूडित ने हमें बताया था कि अगले दिन, अर्थात् रविवार को, संसदीय चुनाव के लिए मतदान होना है जोकि उस समय से, जब कि देश ने नाना-दलीय पद्धति को अपनाया है, दूसरी बार हो रहा है। सात दल इसमें भाग ले रहे हैं। पहिला चुनाव सन् 1990 में हुआ था।

श्रीमती यूडित हमें आवासीय प्रकोष्ठ में ले गईं और यह कहकर कि वे अगले दिन पूर्वाह्ण में 10.30 बजे फिर हमें मिलेंगी हम से विदा ली। हमने कुछ हल्का-सा खाना खाया और दिन-भर इधर-उधर घूमते रहने के कारण उचित समय पर जैसे ही बिस्तर में गए निद्रा देवी ने हमें आ घेरा।

रात के आठ बजे डा. लाज़ार हमें मिलने आए। अगले दिनों के कार्यक्रमों के बारे में उन्होंने हमें बताया। मेरे जीवन-वृत्त-परिचय की एक प्रति उन्होंने मुझसे लेकर विदा ली।

रात गहरा रही थी और ठंड बढ़ती जा रही थी। डा. लॉज़ार ने नया घर लिया था। उस पर रंग-रोगन का काम जारी था। इसी में व्यस्त होने के कारण वे हमें एयरपोर्ट पर लेने नहीं आ सके थे।

हंगरी इटली की अपेक्षा कहीं अधिक ठंडा है। इच्छा तो होती है बाहर जाने की पर हिम्मत नहीं पड़ती। पर घर में पड़े रहना भी अच्छा नहीं लगता।

हमारे प्रकोष्ठ के बाहर की ओर एक बाग-सा है जो बहुत सुन्दर एवम् आकर्षक है। प्राकृतिक परिवेश ने मुझे सदैव आकृष्ट किया है। इस आकर्षण को मैं रोक नहीं पाता। मैं कुछ दृश्यों के चित्र लेना चाहता था, पर मेरे पास कैमरा नहीं था। मैं इसे अपने साथ लाया नहीं। इसका अभाव मुझे बहुत खटक रहा है।

मेरे लिए जो कार्यक्रम निर्धारित किया गया है तदनुसार मुझे हंगरी के लेखकों और बुद्धिजीवियों से मिलना है जिसकी मुझे सोत्सुक प्रतीक्षा

है। साथी लेखक बन्धुओं के साथ मिल-बेठने का अवसर मिल रहा है इससे मैं अत्यन्त आह्लादित हूँ।

8-5-1994

उपरिनिर्दिष्ट पंक्तियाँ मैंने आज प्रातः लिखी हैं। जितने दिन भी मुझे यहाँ रहना है, यही करना है। यही मैंने सन् 1978 की योरुप-यात्रा के दौरान किया था। इससे स्मृतियाँ लिपिबद्ध हो जाती हैं।

मैं इस समय श्रीमती यूंडित की प्रतीक्षा में हूँ। उसके साथ हमें बुदापैश्त के कुछ दर्शनीय स्थानों को देखने जाना है। उनका वर्णन मैं आज सन्ध्या में या कल प्रातः काल में करूँगा। वैसे मेरी इच्छा यही है कि आज सन्ध्या को ही उनके बारे में लिखूँ। 11.30 बजे मुझे संस्कृति मन्त्रालय में डा॰ लॉज़ार से मिलना है। 11.00 बजे का समय मन्त्रालय के महासचिव डा॰ एलैमर बिश्तैश्र्की से मिलने का है। 12. 00 बजे मुझे बुदापैश्त के अतवश लोरान्द विश्वविद्यालय के भारतीय विद्या अध्ययन विभाग की मारिया न्येजैशी से मिलना है।

6.00 बजे मुझे उक्त विभाग में कालिदास पर बोलना है। श्रीमती यूडित पोल्गार हमें कासल दिखाने ले गईं जो कि बुदापैश्त के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक स्थानों में है। अनेक राज परिवारों तथा अच्छी-बुरी घटनाओं का इतिहास इसमें साँस ले रहा है। इसके एक ओर एक महल, मध्य में एक गिर्जाघर और तीन आकृतियों वाली एक प्रतिमा है, तो दूसरी ओर हिल्टन होटल है जिसमें प्राचीनता तथा अत्याधुनिकता का अद्‌भुत समन्वय है। इसका निर्माण प्राचीन अवशेषों पर हुआ जो इसकी नई दीवारों के बीच खम्भों और मध्ययुगीन पत्थरों के रूप में दीख जाते हैं। होटल के आस-पास और भी ऐसे अनेक मकान हैं जहाँ यह विशेषता दीख जाती है जो दर्शक को मुग्ध कर देती है।

हंगरी ने, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, बहुत सहा है। आक्रामक के बाद आक्रामक आते गए और इसे तहस-नहस करते गए, और इस पर

हिंस्र तुर्कों के मीनारों पर फहराया
मात्याश की शक्ति के आगे
गर्वित वियाना को औंधे मुँह गिरवाया

मिनी बस में शहर की ओर जाते समय श्रीमती यूडित ने हमें बताया था कि अगले दिन, अर्थात् रविवार को, संसदीय चुनाव के लिए मतदान होना है जोकि उस समय से, जब कि देश ने नाना-दलीय पद्धति को अपनाया है, दूसरी बार हो रहा है। सात दल इसमें भाग ले रहे हैं। पहिला चुनाव सन् 1990 में हुआ था।

श्रीमती यूडित हमें आवासीय प्रकोष्ठ में ले गईं और यह कहकर कि वे अगले दिन पूर्वाह्ण में 10.30 बजे फिर हमें मिलेंगी हम से विदा ली। हमने कुछ हल्का-सा खाना खाया और दिन-भर इधर-उधर घूमते रहने के कारण उचित समय पर जैसे ही बिस्तर में गए निद्रा देवी ने हमें आ घेरा।

रात के आठ बजे डा. लाज़ार हमें मिलने आए। अगले दिनों के कार्यक्रमों के बारे में उन्होंने हमें बताया। मेरे जीवन-वृत्त-परिचय की एक प्रति उन्होंने मुझसे लेकर विदा ली।

रात गहरा रही थी और ठंड बढ़ती जा रही थी। डा. लॉज़ार ने नया घर लिया था। उस पर रंग-रोगन का काम जारी था। इसी में व्यस्त होने के कारण वे हमें एयरपोर्ट पर लेने नहीं आ सके थे।

हंगरी इटली की अपेक्षा कहीं अधिक ठंडा है। इच्छा तो होती है बाहर जाने की पर हिम्मत नहीं पड़ती। पर घर में पड़े रहना भी अच्छा नहीं लगता।

हमारे प्रकोष्ठ के बाहर की ओर एक बाग-सा है जो बहुत सुन्दर एवम् आकर्षक है। प्राकृतिक परिवेश ने मुझे सदैव आकृष्ट किया है। इस आकर्षण को मैं रोक नहीं पाता। मैं कुछ दृश्यों के चित्र लेना चाहता था, पर मेरे पास कैमरा नहीं था। मैं इसे अपने साथ लाया नहीं। इसका अभाव मुझे बहुत खटक रहा है।

मेरे लिए जो कार्यक्रम निर्धारित किया गया है तदनुसार मुझे हंगरी के लेखकों और बुद्धिजीवियों से मिलना है जिसकी मुझे सोत्सुक प्रतीक्षा

है। साथी लेखक बन्धुओं के साथ मिल-बैठने का अवसर मिल रहा है इससे मैं अत्यन्त आह्लादित हूँ।

8-5-1994

उपरिनिर्दिष्ट पंक्तियाँ मैंने आज प्रातः लिखी हैं। जितने दिन भी मुझे यहाँ रहना है, यही करना है। यही मैंने सन् 1978 की योरुप-यात्रा के दौरान किया था। इससे स्मृतियाँ लिपिबद्ध हो जाती हैं।

मैं इस समय श्रीमती यूँडित की प्रतीक्षा में हूँ। उसके साथ हमें बुदापैश्त के कुछ दर्शनीय स्थानों को देखने जाना है। उनका वर्णन मैं आज सन्ध्या में या कल प्रातः काल में करूँगा। वैसे मेरी इच्छा यही है कि आज सन्ध्या को ही उनके बारे में लिखूँ। 11.30 बजे मुझे संस्कृति मन्त्रालय में डा॰ लॉज़ार से मिलना है। 11.00 बजे का समय मन्त्रालय के महासचिव डा॰ एलैमर बिश्तैश्र्की से मिलने का है। 12. 00 बजे मुझे बुदापैश्त के अतवश लोरान्द विश्वविद्यालय के भारतीय विद्या अध्ययन विभाग की मारिया न्येजैशी से मिलना है।

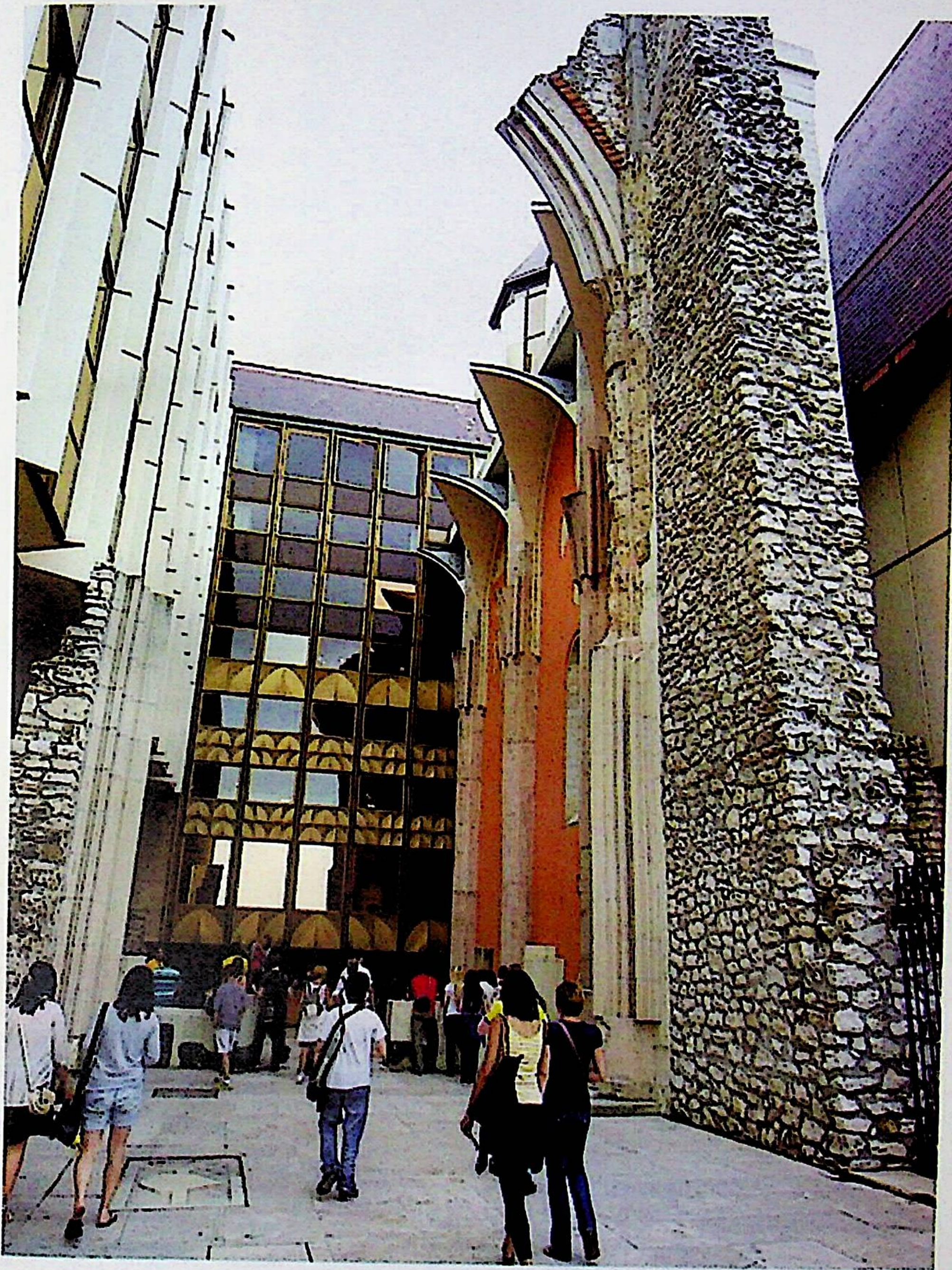
6.00 बजे मुझे उक्त विभाग में कालिदास पर बोलना है। श्रीमती यूडित पोल्गार हमें कासल दिखाने ले गईं जो कि बुदापैश्त के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक स्थानों में है। अनेक राज परिवारों तथा अच्छी-बुरी घटनाओं का इतिहास इसमें साँस ले रहा है। इसके एक ओर एक महल, मध्य में एक गिर्जाघर और तीन आकृतियों वाली एक प्रतिमा है, तो दूसरी ओर हिल्टन होटल है जिसमें प्राचीनता तथा अत्याधुनिकता का अद्भुत समन्वय है। इसका निर्माण प्राचीन अवशेषों पर हुआ जो इसकी नई दीवारों के बीच खम्भों और मध्ययुगीन पत्थरों के रूप में दीख जाते हैं। होटल के आस-पास और भी ऐसे अनेक मकान हैं जहाँ यह विशेषता दीख जाती है जो दर्शक को मुग्ध कर देती है।

हंगरी ने, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, बहुत सहा है। आक्रामक के बाद आक्रामक आते गए और इसे तहस-नहस करते गए, और इस पर

अत्याचार करते गए। पहले मंगोलों ने सन् 1240-49 ईसवी के बीच इसे रौंदा फिर हॉप्सबुर्ग वंशी शासकों ने इसे अपना निशाना बनाया। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय यह नाज़ी जर्मनी और सोवियत संघ के बीच पिसा। हिटलर ने इसे अपने अधिकार में लिया और अपनी सेनाएँ यहाँ जमा दीं। कासल स्क्वेयर में उसने गेस्टेपो स्थापित कर दिया। जब युद्ध में घटनाचक्र जर्मनी के विरुद्ध घूमा तो रूसी आगे बढ़ते हुए हंगरी पहुँचे। रूसियों ने अपने दो सेनानायकों को सफेद झण्डों के साथ जर्मनों को यह सन्देश देने के लिए भेजा कि वे हथियार डाल दें। यह संकेत था जर्मनी और रूसियों में घमासान युद्ध का। इस युद्ध में नुकसान तो बेचारे हंगरी-वासियों का हुआ जिनका इन दोनों से कोई लेना-देना नहीं था। हंगरी की यही नियति थी।

यह उचित ही होगा कि अब हंगरी के इतिहास पर एक दृष्टि डाली जाए। बीते युगों में इस देश के वासी बाहर से यहाँ आए थे। इनका मूल निवास ऊराल की पर्वत-शृंखलाओं में था। वहाँ से वे पश्चिम की ओर चले और चलते-चलते हंगरी पहुंचे। आगे की ओर बढ़ते हुए जनसमुदाय में उस समय अनेक कबीले थे जिनका अपना-अपना मुखिया होता था। इन मुखियाओं का भी एक मुखिया था जिसका नाम था आरपाद। यह उसका निर्णय था कि सभी कबीले आगे न जाएँ और हंगरी में ही बस जाएँ। सम्भवतः स्लाव जाति के लोग तब यहाँ रहते थे। सन् 1896 ई. में आरपाद के कबीलों ने उन्हें अपने अधीन कर लिया। अब यह भूमि उनकी थी। उन्हीं का ही एक वंशज सैन्त इश्तवान हंगरी का पहला राजा बना। उसने सामन्तवादी शासन-व्यवस्था स्थापित की। उसके महत्त्वपूर्ण कार्यों के कारण उसे सन्त घोषित किया गया। सेकैश फैहेरवार उसकी राजधानी थी जहाँ उसने एक गिर्जाघर बनवाया जिसमें उसका मकबरा है। पोप का भक्त होने के कारण वह पूर्व की अपेक्षा पश्चिम की ओर अधिक उन्मुख हुआ।

सन् 1000 ई. में सैन्त इश्तवान का राज्याभिषेक हुआ। गिज़ैला नाम की जर्मन पत्नी से उसका इमरै गोइन नाम का एक पुत्र हुआ जो



प्राचीन अवशेषों पर बना बुदापैश्त का हिल्टन होटल



प्रो. ततशी चौबा

पेच का एक अद्‌भुतालय

बहुत कम उम्र में ही काल-कवलित हो गया। उसके बाद राज अन्य लोगों के हाथ में चला गया जो कि निःसंदेह आरपाद के ही परिवार के सदस्य थे। मंगोलों के आक्रमण के पश्चात् हंगरी के तत्कालीन शासक बेला चतुर्थ ने यह निर्णय लिया कि देश की राजधानी किसी ऊँचे स्थान पर बनाई जाए जिसके चारों ओर सुरक्षा के लिए किलों का घेरा हो। इस बात को ध्यान में रख उसने बुदा को राजधानी बनाया। किले के एक ओर उसने अपने लिए एक महल बनवाया और दूसरी ओर एक गिर्जाघर जिसका निर्माण कार्य 14 वीं शताब्दी तक चलता रहा। मात्याश के समय में वह पूर्ण हुआ। मात्याश की 'न्यायी मात्याश' के नाम से ख्याति थी। उसके विषय में अनेक दन्तकथाएँ प्रसिद्ध हैं। कहा जाता है कि भिखारी के वेष में वह अपने राज्य में घूमता रहता था। जब भी कभी वह किसी अमीर आदमी को गरीब को तंग करते हुए देखता था तो उसे दण्डित करता था। उसकी मृत्यु पर यह कहा गया कि न्याय की ही मृत्यु हो गई है। वह एक विलक्षण व्यक्ति था। उसके पिता का नाम यानोश हून्यॉदी था। सन् 1456 ई० में उसने तुर्कों को रोका था जिससे तत्कालीन रोम का पोप अत्यन्त प्रसन्न हुआ था क्योंकि उसने मुसलमान तुर्कों के ईसाई योरुप में प्रवेश को रोका था। उसने सभी रोमन कैथोलिक गिर्जाघरों को आदेश दिया था कि हर रोज़ मध्याह्न में घण्टे बजाए जाएँ। गिर्जाघरों में अब यह एक प्रथा ही बन गई है। और इसका कठोरता से पालन किया जाता है।

वह रविवार का दिन था जब हम कासल स्क्वेयर से मात्याश गिर्जाघर में गए। ठीक मध्याह्न 12.00 बजे घण्टा बज उठा। जहाँ भी रोमन कैथोलिक गिर्जाघर होता है, 12.00 बजे घण्टा बजने लगता है।

कल, 9-5-1994, का दिन मेरे लिए बहुत व्यस्तता का है। प्रातः 10.30 बजे संस्कृति मन्त्रालय में जाने से लेकर सन्ध्या के 6.00 बजे विश्वविद्यालय में मेरे भाषण तक मुझे व्यस्त रहना है। कई बार मुझे लगता है अपनी ढलती उम्र में मैं आवश्यकता से अधिक काम कर रहा

हूँ। मुझे चाहिए कि बिना किसी चिन्ता के कुछ क्षण आराम के मैं बिताऊँ। पर मेरे जीवन में विश्राम कहाँ! विश्राम न कर पाना ही शायद मेरी नियति है।

9-5-1994

सन् 1966 में अपनी योरुप यात्रा के दौरान मैं अनेक संस्कृत के विद्वानों से मिला था। भारत में लौटने पर मैंने उनमें से प्रत्येक पर लेख लिखे थे जो "पाश्चात्य संस्कृत विद्वान्" शीर्षक लेखमाला के अन्तर्गत हिन्दी के प्रमुख समाचारपत्र नवभारत टाइम्स में प्रकाशित हुए थे। आज सुबह जगने पर मेरे मन में विचार आया कि क्यों न उसी तरह की एक लेखमाला हंगरी के संस्कृत विद्वानों पर प्रकाशित की जाए। उनसे बातचीत इस रूप में की जा सकती है कि वह एक साक्षात्कार का रूप ले ले। हाल की यात्रा में मुझे हंगरी के अनेक संस्कृत विद्वानों से मिलना है। उन पर लेख लिखना कठिन न होगा। मैं चाहता हूँ कि भारत के लोगों को पता चले कि ऐसे लोग हैं जो भारत से सात समन्दर दूर होने पर भी भारतीय वाङ्मय और संस्कृति का एक मन से और सूक्ष्मता से अध्ययन कर रहे हैं।

ठीक 10.30 बजे श्रीमती यूडित आती हैं और हम उनके साथ संस्कृति मन्त्रालय के लिए चल देते हैं जहाँ डा॰ लॉज़ार के साथ कुछ समय बिताने के बाद मन्त्रालय के महासचिव श्री बिस्तैश्र्की के कक्ष में हमें पहुँचा दिया जाता है। बिस्तैश्र्की हमारा स्वागत करते हैं और हमें बताते हैं कि उन्होंने हमारे बारे में बहुत सुना है। वे जानते हैं कि बहुत समय से हमारा सम्बन्ध नई दिल्ली स्थित हंगरी के सांस्कृतिक एवं सूचना केन्द्र से है। बिस्तैश्र्की हंगरी भाषा में बोलते हैं। डा॰ लॉज़ार उनके दुभाषिये का काम करते हैं और उनकी बात अंग्रेज़ी में हमें समझा देते हैं। श्री बिस्तैश्र्की हमारे सुखद प्रवास के लिए अपनी शुभकामनाएँ हमें देते हैं। उनके प्रश्न के उत्तर में मैं उन्हें बताता हूँ कि यह दूसरी बार है कि हम

हंगरी की यात्रा कर रहे हैं। पहली बार हम वहाँ सन् 1977 में आए थे। उस समय हम बॉलॉतोन झील देखने गए थे। इस बार भी हम वहाँ जाना चाहेंगे। तब वे डा॰ लॉज़ार को निर्देश देते हैं कि बॉलॉतोन जाने को भी हमारे कार्यक्रम में शामिल कर लिया जाए। तब अचानक वे कह उठते हैं कि उन्होंने सुना है कि आपने श्रीमती इन्दिरा गान्धी के बारे में एक पुस्तक लिखी है। वे मुझसे पूछते हैं कि क्या वह एक दस्तावेज़ है या अन्य प्रकार की कोई कृति। डा॰ लाज़ार उन्हें बताते हैं कि वह एक सुदीर्घ कविता (महाकाव्य) है। उनके पूछने पर कि कहाँ से मुझे इस प्रकार की कृति के प्रणयन की प्रेरणा मिली, मैं कहता हूँ कि श्रीमती गान्धी के व्यक्तित्व से। उन्होंने और उनके पिताश्री ने वर्तमान भारत के निर्माण के लिए जो किया है, वह और किसी ने नहीं। श्रीमती गान्धी के संस्कृत के प्रति प्रेम के प्रसंग में मैं उन्हें बताता हूँ कि प्रधानमन्त्री बनने से पूर्व उनका अनेक संस्थाओं से सम्बन्ध था। प्रधानमन्त्री बनने के बाद उन्होंने अपने को उनसे अलग कर लिया। पर अखिल भारतीय संस्कृत साहित्य सम्मेलन की अध्यक्षा वे बनी रहीं। मेरा इन्दिरागान्धीचरितम् उनकी जीवन गाथा का वर्णन करता है। संस्कृत में उन पर लिखा गया यह एकमात्र महाकाव्य है यद्यपि अनेक छोटी-मोटी कृतियाँ उन पर लिखी गई हैं। यह सुन वे कहते हैं कि उसका हंगेरियन में अनुवाद होना चाहिए। उनके प्रश्न के उत्तर में मैं उन्हें बताता हूँ कि अंग्रेज़ी में इसका अनुवाद नहीं हुआ है। हिन्दी में इसका अनुवाद अवश्य हुआ है। इस पर उनका कहना है कि ऐसा अनुवादक मिलना सम्भव है जो हंगेरियन भाषा में इसका अनुवाद कर सके। अब चूँकि आप लेखकों और अनुवादकों से मिलने जा रहे हैं, आप इस सम्भावना को भी तलाशियेगा। और आगे बढ़कर वे कहते हैं कि हंगेरियन अनुवाद के साथ-साथ हंगेरियन पत्रिकाओं में इसकी समीक्षा भी प्रकाशित होनी चाहिए। उनका सुझाव मन को कहीं गहरे तक छू जाता है। इससे यह भी पता चलता है कि श्रीमती गान्धी के प्रति इस देश में कितना आदर है।

जैसे ही वार्तालाप आगे बढ़ता है डा॰ लॉज़ार बिस्तैश्की महोदय को बताते हैं मुझे लक्ष्य कर कि इन्होंने हंगरी के महान् कवि शान्दोर वरश की कतिपय कविताओं का संस्कृत में पद्यानुवाद किया है, एवंच व्यक्तिगत साक्षात्कार के आधार पर हंगरी के प्रमुख संस्कृतज्ञों पर एक लेख माला प्रकाशित करने का इनका विचार है। इस पर श्री बिस्तैश्की का कहना है कि यह बहुत सनसनीखेज विचार है। हंगरी की भाषा किसी कारणवश 'द्वीपभाषा' (Island language) रही है। बाहर के लोगों को हंगरी के बारे में बहुत जानकारी नहीं है यद्यपि इसने महान् विचारकों, साहित्यकारों, मनीषियों तथा वैज्ञानिकों को जन्म दिया है एवंच उन्हें जिन्होंने कोई-न-कोई आविष्कार किया है। यदि आपके माध्यम से आपके देशवासी उनके बारे में जान सकें, तो यह हंगरी की बहुत बड़ी सेवा होगी। इस पर मैं कहता हूँ—यदि दो महान् देशों, भारत और हंगरी को एक दूसरे के और अधिक निकट लाने में मैं सहायक हो सकूँ तो इससे मुझे अपार सुख मिलेगा। यह सुन वे अत्यन्त प्रसन्न होते हैं। आनन्द और सन्तोष की आभा उनके मुखमण्डल पर स्पष्ट झलकती है।

मेरे भाषण का विषय है—'कालिदास की भाग्यपरक दृष्टि विशेषकर अभिज्ञान-शाकुन्तल के सन्दर्भ में'। भाषण तत्काल लोगों को मुग्ध कर देता है जिससे मेरे मन में आनन्द की लहर दौड़ जाती है। अपने कक्ष की ओर वापस जाते समय श्रीमती यूडित मुझे दोश्ज़ा नाम के एक व्यक्ति का पुतला दिखाती हैं जहाँ रोशनी की हुई है। वह उन किसानों का नेता था जिसने सन् 1514 में सामन्तों के विरुद्ध विद्रोह किया था। विद्रोह असफल रहा था और उसे जिन्दा जला दिया गया था। उन्नीसवीं शताब्दी में एक कवि ने उसे भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा था—दोश्ज़ा, तुम्हारा शरीर उन्होंने जला दिया है पर वे तुम्हारी आत्मा को नहीं जला सकते क्योंकि वह तो स्वयम् आग थी।

श्रीमती यूडित हमें अपने आवास स्थल पर पहुँचाकर और यह कहकर कि वे अगले दिन प्रातः पुनः आएँगी, हमसे विदा लेती हैं।

10-5-1994

प्रातः 10.00 बजे हम श्रीमती यूडित के साथ राष्ट्रीय कलादीर्घिका को देखने के लिए जाते हैं। प्रदर्शित वस्तुओं में तिवादोर चोन्तवारी नाम के चित्रकार के चित्र हैं जो सचमुच अद्‌भुत हैं। उनमें से एक विशेष रूप से मेरा ध्यान आकर्षित करता है। सुनने में आता है कि चित्रकार बाद के वर्षों में पागल हो गया था। उपरिनिर्दिष्ट चित्र में उसने स्वयं को एक होश हवास खोये हुए व्यक्ति के रूप में चित्रित किया है। यह निश्चित ही विचित्र है। पहले स्वयं को एक उन्मत्त व्यक्ति के रूप में कल्पना करना और बाद में उसका उस रूप में चित्रण! कल्पना की और सूक्ष्म मनोभावों की अभिव्यक्ति की यह पराकाष्ठा है। यह सचमुच एक आश्चर्य है कि किस तरह एक चित्रकार, यदि वह वास्तव में पागल था, अपने पागलपन को चित्र के माध्यम से प्रकट कर सका। उसके चित्रों में से वह एक चित्र ही उसे प्रशंसा का पात्र बनाने के लिए पर्याप्त है।

श्रीमती यूडित हमें चोन्तवारी के चित्रों के बारे में एक बहुत ही रोचक जानकारी देती हैं। उसकी मृत्यु के बाद उसके परिवारजनों ने उनकी नीलामी की। उन्हें एक व्यापारी ने खरीद लिया, घर की सजावट के लिए नहीं, अपितु वाहनों में अपने माल को ढकने के लिए। एक तेईस वर्षीय प्रबुद्ध गार्दोनी गेज़ा नाम के आर्किटेक्ट को यह नहीं जँचा। उसने व्यापारी को चित्रों को खरीदने से मना किया और उसके स्थान पर स्वयम् उन्हें खरीद लिया। चालीस साल तक वे वैसे-के-वैसे ही उसके पास पड़े रहे। उसके बाद पेच के अद्‌भुतालयों ने उनमें रुचि दिखाई जिस कारण उनकी प्रदर्शनी लगाई गई। उसी शृंखला में बुदापैश्त में भी प्रदर्शनी लगी। सुना यह जा रहा है कि अब उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय कला प्रदर्शनियों में प्रदर्शित किया जाएगा।

मध्याह्न के 12.30 बजे हम अपने आवास में लौट आते हैं और कुछ समय विश्राम के बाद पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार विश्वविद्यालय में भारतीय विद्या विभाग के अध्यक्ष सुप्रसिद्ध संस्कृत विद्वान् चौबा ततशी

से मिलने अतवश लोरान्द विश्वविद्यालय पहुँच जाते हैं। उनसे मिलने के दौरान सारा समय मारिया न्येजैशी उपस्थित रहती हैं। प्रो. ततशी कुछ ऊँचा सुनते हैं। अंग्रेज़ी में बोलने का अभ्यास उन्हें नहीं है। न्येजैशी उनके दुभाषिये का काम करती हैं और वे जो कहते हैं उसे हमें हिन्दी में बता देती हैं। प्रो. ततशी कहते हैं कि उन्हें हम से मिलकर बहुत प्रसन्नता हो रही है। इसी से वार्तालाप का श्रीगणेश वे करते हैं। मेरी ओर लक्ष्य कर वे कहते हैं कि मैं आपसे मिल चुका हूँ। अवसर था सन् 1975 में टोरीनो में विश्व संस्कृत सम्मेलन का। मैं उनकी स्मृतिशक्ति पर विस्मित होता हूँ। सन् 1975, 1995 से कहीं दूर है—उन्नीस वर्षों का अन्तराल! मैं प्रो. ततशी को बताता हूँ कि मेरी योजना है हंगरी के संस्कृत विद्वानों पर लेख लिखने की उसी पद्धति से जिससे मैंने सन् 1977 में योरुप यात्रा के पश्चात् योरुपीय संस्कृत विद्वानों पर लेख लिखे थे। मैं उनके जीवन-वृत्त-परिचय की प्रति के लिए उनसे अनुरोध करता हूँ। वह कहाँ होगी इसके विषय में उन्हें निश्चित जानकारी नहीं है। "उसे ढूँढ़ना होगा," वे कहते हैं। उनकी अजीब आदत है। वे चीज़ों को भूल जाते हैं। उन्होंने सौ पृष्ठ के लगभग लिखे थे जो अध्ययन सामग्री के रूप में उनके काम आ सकते थे। पता नहीं उन्होंने वे कहाँ रख दिए। जब मैं उनसे अपनी एक फोटो देने के लिए कहता हूँ, तो वे मुस्करा देते हैं। मैं उनसे कहता हूँ कि शुकसप्तति पर उन्होंने कार्य किया है, इसकी जानकारी मुझे है पर मैं उनके विषय में और अधिक जानना चाहता हूँ—उनकी प्रारम्भिक शिक्षा कहाँ और किस प्रकार हुई आदि। यह उन्हें पूर्व स्मृतियों की ओर ले जाता है। कुछ चिन्तन की मुद्रा में वे कहते हैं कि वह मोरवाद का युग था। वे यह कह तो देते हैं पर बाद में उन्हें लगता है कि शायद इसका अर्थ मैं न समझ पाया होऊँगा। वे अपनी बात को स्पष्ट करने का प्रयास करते हैं। सोवियत रूस में मोर नाम का एक विद्वान् था। उसका मत था कि तुलनात्मक भाषा विज्ञान एक 'बुर्जुवा कन्सेप्ट' है। इसके उल्लेख मात्र से उन्हें परिहार था। उस समय के ओसवोल्ड सेमेरेन्सी नाम के एक प्रोफेसर उनसे इतने तंग थे कि वे लण्डन में जा बसे थे। मोरवाद का बोलबाला

काफी समय तक रहा। उनकी मृत्यु से कुछ समय पूर्व स्टालिन ने उनके मत को सर्वथा अवैज्ञानिक कहा था। अपने जीवन-काल में यही एक अच्छा काम था जो स्टालिन ने किया था। स्टालिन की घोषणा के बाद मोरवाद का अन्त हो गया। इससे विभाग में एक नया परिवर्तन आया। विभाग के इतिहास के बारे में बताते हुए प्रो॰ ततशी ने कहा कि यह 120 साल पुराना है और गत चालीस वर्षों से वे इसमें काम कर रहे हैं। प्रारम्भ में उन्होंने लैटिन और प्राचीन ग्रीक की पढ़ाई की थी। उन दिनों लैटिन बहुत लोकप्रिय थी। लोगों को बहुत सी भाषाओं का ज्ञान था। उनके दादा के परिवार में यह स्थिति थी कि दादा लैटिन बोलते थे और दादी फ्रैंच। दैनन्दिन व्यवहार की भाषा जर्मन थी। भारत की तरह यहाँ भी लोग एकाधिक भाषा जानते हैं। क्योंकि उन्होंने प्राचीन भाषा का अध्ययन किया था इसलिए उन्होंने सोचा कि वे प्राचीन ग्रीक भाषा विभाग में काम करें। जब प्रो॰ हॉरमॉता के नेतृत्व में विभाग को पुनरुज्जीवित किया गया तो उन्होंने एक योग्य व समझदार व्यक्ति की तलाश में इधर-उधर देखा। उस समय मोरवाद के प्रभाव के कारण तुलनात्मक भाषा विज्ञान की पढ़ाई नहीं होती थी। मोरवाद के अन्त के बाद उस समय के सभी अध्यापकों का मत था कि केवल वे (ततशी) ही इसे सीख पाएँगे। उनका प्राचीन भाषाओं के प्रति अनुराग सर्वविदित था। हंगरी में संस्कृत की पढ़ाई की स्वीकृति तो सरकार ने दे दी थी पर इसके लिए कोई आर्थिक प्रावधान नहीं किया था। प्रो॰ ततशी ने संस्कृत अपने से सीखी थी। जिस समय बुदापैश्त विश्वविद्यालय में संस्कृताध्यापन प्रारम्भ हुआ, वे संस्कृत सीख चुके थे। प्रो॰ ततशी को इसका गर्व है कि विश्वविद्यालय में संस्कृताध्यापन का श्रीगणेश उन्हीं से हुआ। इसका उन्हें और भी गर्व है कि विभाग में संस्कृताध्यापन का स्तर बहुत ऊँचा है। इसके प्रमाण के रूप में वे कहते हैं कि उनके छात्र जहाँ कहीं भी गए, चाहे वह लण्डन हो या न्यूयार्क या भारत, उनका प्रदर्शन बहुत अच्छा रहा। उनके अध्यापक उनसे बहुत सन्तुष्ट रहे। विश्वविद्यालय में संस्कृत की पढ़ाई प्रारम्भ करने के लिए उन्होंने अपने से प्रयास किया। सरकारी आर्थिक प्रावधान की प्रतीक्षा नहीं

की। इससे सरकार को लगा कि शायद उन्हें सरकारी सहायता की आवश्यकता ही नहीं है!

सन् 1962 में प्रो॰ ततशी ने पी-एच.डी॰ उपाधि के लिए शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किया जो शुकसप्तति पर था। तत्कालीन विभागाध्यक्ष प्रो॰ हॉरमॉत्ता के अनुसार उनके यहाँ कोई शोध-प्रबन्ध शायद ही प्रस्तुत किया गया होगा। प्रो॰ ततशी ने बुदापैश्त विश्वविद्यालय से ही पी-एच.डी॰ की। उनका कहना है कि उन्होंने वैज्ञानिक पद्धति से शोध किया है जिसे वे लेखबद्ध करना चाहते हैं पर इसके लिए उनके पास समय नहीं है। वह उन्हें सेवा निवृत्ति के बाद ही मिल पाएगा जिसमें अभी कुछ समय शेष है। योरुप में सेवा निवृत्ति की उम्र 65 वर्ष है। प्रो॰ ततशी इस समय 62 वर्ष के हैं उनकी जन्म तिथि है 6 जुलाई, 1930। वे मुस्करा देते हैं जब मैं उन्हें बताता हूँ कि वे मुझसे तीन महीने बड़े हैं। शुकसप्तति पर चर्चा को आगे बढ़ाते हुए वे कहते हैं कि उन्होंने इसका हंगेरियन में अनुवाद किया है। उनके अनुवाद के बाद ही इसका जर्मन और रूसी भाषाओं में अनुवाद हुआ। उनका यह मानना है कि यह कृति स्वरूप और शैली में योरुपीय कृतियों की तरह ही है। बोलाच्चो ने इसकी अनेक कहानियों का इतालवी भाषा में अनुवाद किया था। योरुपीय लोग कहानी को इस तरह पेश करना चाहते हैं कि सुनाने वाले तथा सुनने वाले को इसे समझने में अधिक समय न लगे। इस क्षण वे एक चौंका देने वाली बात कहते हैं। योरुपीय विद्वान्—इसके अपवादस्वरुप केवल वे ही हैं—सतही हैं। रिहाई स्मित के अनुसार बालसरस्वती ग्यारह दिन तक प्रातः और सायम् एक-एक कहानी कहती जाती है। जिन शब्दों का ग्रन्थ में प्रयोग किया गया है वे हैं प्रभाते, प्रातः पुनरपि। द्वितीय दिन यह शब्द अगले दिन का अर्थ देता है न कि दूसरे दिन का। प्रो॰ ततशी का कहना है कि सतही तौर पर किसी कृति के अध्ययन करने से उसके साथ न्याय नहीं हो सकता। यह किसी के लिए अच्छा नहीं है। अनुवादक को मूल के प्रति वफ़ादार होना चाहिए। इसीलिए वे कहते हैं, मैं संस्कृत के अध्ययन पर बल देता हूँ। इतिहास तथा संस्कृत साहित्य के इतिहास पर अनेक ग्रंथ हैं। विद्यार्थियों को यह

बतलाने की आवश्यकता है कि उन्हें कैसे पढ़ा जाए। विद्यार्थी तब उन्हें रुचि लेकर पढ़ेंगे। अपने सहयोगियों की चर्चा के प्रसंग में डा. मारिया न्येजैशी की वे विशेष प्रशंसा करते हैं।

अब चूँकि हमारा इल्दिको पुश्काश से मिलने का समय हो रहा है, हमें अपनी चर्चा को विराम देना ही होता है। हम प्रो. ततशी से एक बार और मिलने का समय माँगते हैं। 16-5-1994 को अपराह्ण 2.30 का समय वे निर्धारित करते हैं। उस दिन वे हमें बताते हैं कि वे दो बार भारत गए हैं और दोनों ही बार विश्वसंस्कृत-सम्मेलन में भाग लेने के लिए। पहिली बार जब सन् 1971 में वे भारत आए थे तब उन्होंने दिल्ली में विश्वसंस्कृत-सम्मेलन में भाग लिया था। सम्मेलन में भाग लेने के बाद वे कुरुक्षेत्र गए थे, जहाँ वे कुछ सप्ताह रुके थे और वहाँ के विश्वविद्यालय में व्याख्यान दिए थे। दूसरी बार सन् 1981 में वे भारत गए थे। तब उन्होंने वाराणसी के विश्वसंस्कृत-सम्मेलन में भाग लिया था।

प्रो. ततशी के कोई सन्तान नहीं है। इसकी कभी उन्हें इच्छा ही नहीं हुई। वे बहुत नाजुक मिज़ाज के हैं। बच्चों को जो-जो कष्ट सहने पड़ते हैं वे उनके अध्ययन में बाधा पहुँचाते। इसलिए उन्होंने सन्तान न उत्पन्न करना ही अच्छा समझा। जहाँ तक उनके वैवाहिक जीवन का सम्बन्ध है उनकी इस समय की पत्नी तीसरी है।

प्रो. ततशी के रुचि के विषयों में विशेष उल्लेखनीय है प्राचीन ग्रीक एवं ईरानी (फ़ारसी) तथा संस्कृत शब्दों का तुलनात्मक अध्ययन। उनका कहना है कि जब ईरानी भारत में बहुमूल्य रत्न लाते थे तो उनके संस्कृत नाम भी साथ में लाते थे। जब ये नाम योरुप में पहुँचे तो इनमें परिवर्तन हुआ। इस परिवर्तन का अध्ययन प्रो. ततशी की विशेष रुचि का है और इसी के अध्ययन में वे सम्प्रति लगे हैं।

शुकसप्तति में उनकी रुचि की चर्चा चलने पर वे अपने अतीत की ओर झाँकते हैं। सन् 1956 के आन्दोलन के बाद, वे कहते हैं, जीवन हंगरी में अधिक उन्मुक्त था। उस समय के एक प्रकाशक ने उनसे पूछा था कि संस्कृत की ऐसी कौन सी कृतियाँ हो सकती हैं जो हंगरी के लोगों

को रुचिकर हों। प्रश्न यह नहीं है कि प्रो॰ ततशी की रुचि की कौन सी कृतियाँ हैं। यहाँ उपयोगिता की कोई बात नहीं थी, बात केवल रुचि की थी। जहाँ तक उपयोगिता का सम्बन्ध है, वेद बहुत अच्छे हैं पर बिना सही व्याख्या के सामान्य जन की समझ से बाहर हैं। रामायण बहुत बड़ी है उसे पढ़ने में बहुत समय चाहिए। जब उन्होंने (प्रो॰ ततशी ने) शुकसप्तति को पढ़ना प्रारम्भ किया तो उन्होंने पाया कि इसकी भाषा बहुत सुन्दर एवम् आलंकारिक है जो कि योरुप वासियों के लिए निश्चित ही कठिन है। इस कृति में श्लेष और सुदीर्घ वाक्यों की भरमार है। पर इसका कथानक रोचक है। इस कठिन पर रुचिकर कृति का अनुवाद अपने में चुनौती थी। प्रो॰ ततशी ने इस चुनौती को स्वीकार किया और हंगेरियन में इसका अनुवाद तैयार किया जिसे लोगों ने बहुत सराहा। शुकसप्तति की कठिन पदावली के प्रति प्रो॰ ततशी की अभिरुचि थी।

(3)

1999

26-9-1999

हम हंगरी और पोलैण्ड की यात्रा के लिए प्रस्थान करते हैं। फ्लाइट रात के 1.25 पर है। वियाना और वार्सा के रास्ते हमें बुदापैश्त पहुँचना है। नई दिल्ली के इन्दिरा गांधी अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे के प्रस्थान कक्ष में जब मैं कार्ड भर रहा होता हूँ तो मैं किसी को यह कहते हुए सुनता हूँ—"शास्त्री जी तो बैंकाक ही जा रहे होंगे"। मैं कार्ड से दृष्टि हटाकर देखता हूँ। अरे यह तो हमारे पुराने मित्र दया प्रकाश सिन्हा हैं! मैं उन्हें कहता हूँ कि इस बार यात्रा बैंकाक की नहीं, अपितु बुदापैश्त की है। अन्तिम पड़ाव मेरा वार्सा है जहाँ प्राच्य विद्या संस्थान में संस्कृत और तत्सम्बद्ध विषय पर आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में मुझे भाग लेना है। श्री सिन्हा अपनी छोटी लड़की से मिलने अमेरिका जा रहे हैं। मैं अपनी पत्नी को बताता हूँ कि सम्प्रति वे भारतीय जनता पार्टी के सांस्कृतिक विभाग के अध्यक्ष हैं।

मैं और धर्मपत्नी सन्ध्या के 6.50 बजे बुदापैश्त पहुँचते हैं। हवाई अड्डे पर हमारे एक युवा मित्र श्री गैर्गैय हिदॉश हमारा स्वागत करते हैं जिनसे डा. गेज़ा बैत्लैनफॉल्वी ने दिल्ली में हमारा परिचय कराया था। वे हमें हमारे होटल में पहुँचा देते हैं, वही होटल जिसमें हम गत बार भी ठहरे थे और जिसकी व्यवस्था डा. गेज़ा ने की थी। हमें कमरे में पहुँचा दिया जाता है और हम रात्रिशयन की ओर उन्मुख हो जाते हैं।

27-9-1999

हम केवल आराम करते हैं। दो-दो जगह रुकने के कारण जहाँ लम्बी देर तक प्रतीक्षा करनी पड़ी थी यात्रा में हमें बहुत थकावट हो गई थी। दिल्ली से वियाना तक की उड़ान बहुत लम्बी थी—आठ घण्टों की।

अपराह्ण में, 4 बजे, श्री गैर्गैय हमें मेट्रो ट्रेन से, जिसमें सवार होने तथा बाहर आने में बहुत चलना पड़ता है जोकि सन्धि रोग से ग्रस्त मेरी धर्मपत्नी के लिए बहुत कष्टदायक है, विश्वविद्यालय पहुँचा देते हैं। वहाँ हमारी भेंट हिन्दी की प्राध्यापिका डा. मारिया न्येजैशी, भारत से अभ्यागत आचार्य के रूप में आए डा. लक्ष्मण सिंह बिष्ट तथा उत्तरी बंगाल विश्वविद्यालय की दर्शनशास्त्र की प्राध्यापिका डा. मंजुलिका घोष से होती है। डा. घोष सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम के अन्तर्गत 'जो दृष्टिगोचर हैं, तथा जिनकी सत्ता है उन्हीं पदार्थों का ज्ञान होता है, इस दृष्टि से भाषा दर्शन एवंच सामाजिक तथा राजनैतिक दर्शन योजनाओं' पर कार्य करने के लिए सम्प्रति बुदापैश्त में हैं। बृहस्पतिवार, 30 नवम्बर, 1999, को मुझे दो भाषण देने हैं। एक संस्कृत के पर्यायवाची शब्दों पर विश्वविद्यालय में और दूसरा हिन्दू विवाह संस्कार पर बुदापैश्त स्थित भारतीय दूतावास में। यद्यपि एक ही दिन में दो भाषणों का अर्थ है मेरे लिए अत्यधिक आयास पर इसके सिवाय और कोई चारा नहीं है। बृहस्पतिवार ही एक ऐसा दिन होता है जिसमें विद्यार्थियों को सुविधा होती है। यही वह दिन भी है जो दूतावास ने भाषणों के लिए निर्धारित किया हुआ है।

कार्यक्रम सुनिश्चित करने के बाद हम होटल लौट आते हैं और निद्रा की शरण लेते हैं।

28-9-1999

प्रातः 9 बजे श्री पेतैर हॉयतो हमारे होटल आते हैं और अपनी कार में हमें बॉलॉतोन ले जाते हैं। रास्ते-भर उनके साथ रोचक बातचीत चलती रहती है। वे हमें बताते हैं कि कैसे पी-एच. डी. करने के लिए जामिया मिलिया

में उन्होंने प्रवेश लिया था और एतदर्थ किस तरह का उनका प्रयास रहा था। उन्होंने जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में प्रवेश के लिए प्रयास किया। विश्वविद्यालय ने अपने यहाँ तो प्रवेश नहीं दिया पर जामिया मिलिया के फ़ारूकी नाम के एक व्यक्ति के नाम एक पत्र दिया। वे जामिया मिलिया में इस्लामिक अध्ययन विभाग के अध्यक्ष थे। श्री पेतैर हॉयतो वह पत्र लेकर उनके पास गए। प्रो. फ़ारूकी ने पत्र देखा और कहा कि यह उनके लिए नहीं है अपितु उनके पिताश्री, बड़े फारूकी, के लिए जिन्हें वे ज़ाकिर हुसैन पुस्तकालय में मिल सकते हैं। श्री पेतैर हॉयतो उनके पास गए। वे एक सूफ़ी सन्त की तरह पुस्तकालय में विराजमान थे। उन्होंने पत्र देखा और उनका निर्देशक बनना स्वीकार किया। पी-एच. डी. के लिए जो विषय उन्होंने सुझाया वह था "अस्सी सान् फ्रांसी तथा हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया का तुलनात्मक अध्ययन"। श्री हॉयतो इस विषय पर पी-एच. डी. हो पायगी या नहीं इस बारे में आश्वस्त नहीं थे। बड़े फ़ारूकी साहब (उनका नाम आज़ाद फ़ारूकी था) से उन्होंने कहा कि मुझे फ़ारसी नहीं आती है। 'कोई बात नहीं' उन्होंने कहा। मैंने हाल ही में हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया के प्रवचनों का अंग्रेज़ी में अनुवाद किया है। उनकी कृति उन्हें उपलब्ध रहेगी। इससे वे (पेतैर हॉयतो) आश्वस्त हुए। उन्होंने इस विषय पर कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। उन्हें बहुत दुःख हुआ कि शोध-प्रबन्ध जमा करने से पूर्व ही बड़े फ़ारूकी साहब दिवंगत हो गए। श्री हॉयतो को अब मौखिक परीक्षा की प्रतीक्षा है। जब आवश्यकता होगी, तो एतदर्थ वे भारत जाएँगे।

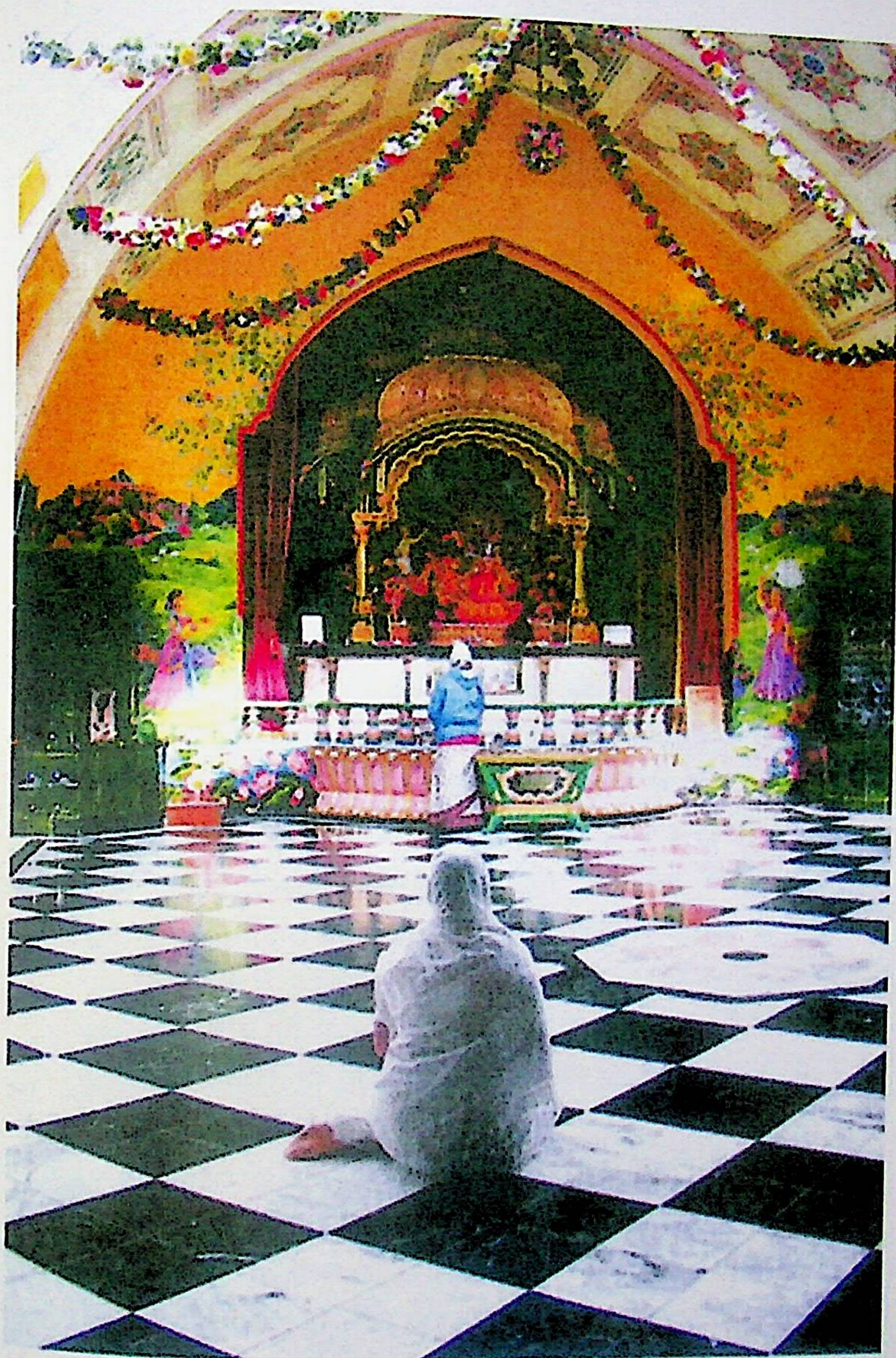
श्री हॉयतो मन्त्रालय में सम्प्रति जो काम वे कर रहे हैं उससे भी हमें अवगत कराते हैं। वे अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध विभाग में परामर्शदाता हैं। विभाग का काम शिक्षा, मुक्त शिक्षा और शिक्षा से वंचित लोगों को शिक्षित करने से सम्बद्ध है।

हम बॉलॉतोन झील पहुँचते हैं जो अपने 55 मील लम्बे तथा 17 मील चौड़े विस्तार के कारण समुद्र का आभास देती है, टैगोर की प्रतिमा देखते हैं जिसके आसपास भारत से आने वाले प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने

समय-समय पर आकर वृक्षों को रोपा है, उनकी फोटो लेते हैं, झरने का पानी पीते हैं जिसके बारे में प्रसिद्धि है कि उसमें औषधीय गुण हैं, इसके निकटवर्ती हस्पताल का अवलोकन करते हैं जहाँ कहा जाता है कि टैगोर ने इलाज कराया था, हस्पताल से खरीदी गई बोतल में बुदापैश्त में उपयोग में लाने के लिए चश्मे का पानी भरते हैं, और झील के दक्षिण की ओर एक रेस्तराँ में भोजन के लिए चल देते हैं। रास्ते में श्री हॉयतो चीन विश्वविद्यालय में समुद्री जीवविज्ञान विषय के प्रोफेसर डा. दामोदरन् को भोजन में हमारे साथ शामिल होने के लिए साथ ले लेते हैं।

भोजन समाप्ति पर हम हरे कृष्ण सम्प्रदाय द्वारा स्थापित "कृष्ण वल्ग्य", कृष्ण वैली, कृष्ण घाटी को देखने के लिए चल देते हैं। इसके लिए हमें झील पार करनी होती है जो हम एक बहुत बड़ी 'फैरी' (नाव) के माध्यम से करते हैं, इतनी बड़ी कि उसमें कारें और बसें भी ले जाई जा सकती थीं। हम कार को फैरी के निचले भाग में छोड़ देते हैं और उसके ऊपरी भाग में चढ़ जाते हैं। झील तथा उसके आसपास के उस दृश्य का हम आनन्द उठाते हैं जो हमारी जीवन-भर की स्मृति बन जाता है। झील के उस पार पहुँचने पर हम फिर कार में सवार हो जाते हैं और कृष्ण घाटी की ओर चल देते हैं।

जब हम रेस्तराँ से चले थे तो उस समय दोपहर के 2 बजे थे। हमारा विचार था कि हम 3 या 3.30 बजे घाटी में पहुँच जाएँगे। इसी विचार से श्री हॉयतो ने उसी समय के आस-पास गाइड का प्रबन्ध किया था जिसने हमें घाटी का चक्कर लगवाना था। पर रास्ता मालूम न होने के कारण हम चलते ही चले गए, गोल-गोल चक्कर काटते रहे और अन्त में 6 बजे वहाँ पहुँचे। गाइड तब तक जा चुका था। शाम घिरती जा रही थी। स्वागत कक्ष के पास राधिका नाम की एक लड़की वैष्णव 'मेकअप' में साड़ी पहिने, पौधों को पानी दे रही थी। मैं उसकी फोटो लेने के लोभ का संवरण न कर सका। ठीक उसी समय धोती और साड़ी पहिने गौर वर्ण के हंगेरियन वैष्णव भक्तों से भरी एक मिनी बस वहाँ रुकी। जैसे ही



कृष्ण वैली में कृष्ण मन्दिर का मण्डप

वे भक्तजन उसमें से बाहर आ रहे थे मैंने उनकी फोटो लेने का सोचा। मेरे सुझाव पर उन्होंने एक दल बना लिया जिसके मध्य भाग में मैं, मेरी धर्मपत्नी, श्री हॉयतो तथा डा. दामोदरन् थे। ठीक उसी समय मेरा कैमरा अटक गया। फोटो लेने का तो अब कोई प्रश्न ही नहीं था।

कृष्ण घाटी एक बहुत बड़ा क्षेत्र है जिसमें छोटे-बड़े अनेक मन्दिर हैं, गोशाला है, बेकरी है और रेस्तराँ है। मैं कार में मुख्य मन्दिर पहुँच गया जहाँ हमारी भेंट मन्दिर के उपाध्यक्ष श्री मनोरमदास, एक अन्य महत्त्वपूर्ण अधिकारी श्री गौरशक्तिदास तथा राधारानी से हुई। वे हमें मन्दिर के अलग-अलग हिस्सों में ले गए। हमें यह बताया गया कि मन्दिर सन् 1996 में बना था। इसके नृसिंहमण्डप का उद्घाटन इसी वसन्त में ही हुआ था। इसमें नृसिंह की मूर्ति 351 वर्ष पुरानी है। पुरी में इसकी प्राण प्रतिष्ठा हुई थी। यह एक परिवार के पास थी जिसने इसे इस मन्दिर को भेंट कर दिया।

हमें यह बताया गया कि वहाँ (कृष्ण घाटी में) 100 के लगभग भक्त हैं जो मन्दिर के परिसर में रहते हैं। इस्कोन्स के हंगरी में 10 केन्द्र हैं। इन सभी केन्द्रों में भक्तों जिन्हें, मंक (सन्यासी) इस संज्ञा से पुकारा जाता है, की संख्या सब मिलाकर 200-250 के बीच होगी। मैं श्री मनोरमदास से अनुरोध करता हूँ कि वे कैमरे तथा भक्तों के साथ हमारे कुछ चित्रों का प्रबन्ध करें ताकि मैं भारत में अपने देशवासियों को दिखा सकूँ कि हंगरी में एक लघु भारत है। माननीय मनोरमदास मेरी प्रार्थना स्वीकार करते हैं। वे वचन देते हैं कि चित्रों को वे बुदापैश्त में श्री पेतैर हॉयतो को भिजवा देंगे जो अपनी ओर से वचन देते हैं कि वे उन्हें भारत में हमें भिजवा देंगे।

लौटकर आने वाली "फैरी" के लिए देर होती जा रही थी। रात्रि के 8 बजे उसके चलने का समय था। डा. दामोदरन् को बॉलॉतोन के दक्षिणी भाग में स्थित उनके होटल बॉलॉतोन फ़्यूरैद में पहुँचाना था। उन्हें वहाँ छोड़ना और वहाँ से बुदापैश्त पहुँचना यह एक लम्बी कार यात्रा थी। इस बीच वृष्टि भी प्रारम्भ हो गई थी। लगभग आधी रात हो गई थी जब हम

बुदापैश्त पहुँचे। थके-माँदे हम बिस्तर पर लेटे और लेटते ही निद्रा ने हमें आ घेरा।

29-9-1999

हंगेरियन एकेडेमी ऑफ साइंसिज़ में हम मध्याह्न भोजन करते हैं। अन्य निमंत्रितों में हैं, हंगरी में भारतीय राजदूत श्रीमती लक्ष्मी पुरी एवंच सुश्री रोज़ॉलिया। राजदूत हमें बहुत मिलनसार तथा निरहंकारी प्रकृति की लगीं। जब भोजन परोस दिया गया और 'बॉन एपितीत' (अच्छी भूख लगे) इन शब्दों का उच्चारण कर दिया गया, तो उन्होंने मुझसे पूछा कि क्या संस्कृत में भी इस तरह की कोई उक्ति है? मैं चुप रह जाता हूँ। इस पर वे स्वयं कहती हैं कि वहाँ 'अन्नं व्रतपते' इत्यादि उक्तियाँ तो हैं पर 'बॉन एपितीत' जैसा कुछ नहीं। मेरी पत्नी कहती हैं कि हम भारतीयों के लिए भोजन एक आध्यात्मिक प्रक्रिया है। अन्न को अपने यहाँ ब्रह्म कहा गया है—अन्नं वै ब्रह्म। यह एक अंश तक राजदूत को सन्तुष्ट कर देता है। जब सुश्री रोज़ॉलिया राजदूत को यह बतलाती हैं कि मधुराष्टकम् के भाव को सम्यक् बुद्धिस्थ करने में उसने मेरी सहायता ली थी जिसके आधार पर वह उसके प्रत्येक पद्यांश में वर्णित स्वरूप को चित्रों के माध्यम से प्रस्तुत कर सकीं, तो राजदूत कहती हैं कि क्या यह वही है 'वदनं मधुरम्' आदि। सुश्री रोज़ॉलिया के कहने पर कि 'जी हाँ' तो वे कहती हैं वह पुस्तक मेरे पास है। यह कहे जाने पर कि वे (राजदूत) एक उत्कृष्ट नृत्यांगना हैं, वे कहती हैं कि बचपन में नृत्य सीखा था। माता-पिता से इसके लिए प्रोत्साहन नहीं मिला। वे रुढ़िवादी विचारों के थे। नृत्य के विषय में उनका मत था कि नाचना-गाना देवदासियों का काम है। उनकी माता महाराष्ट्र की थीं और पिता उत्तरी कन्नड़ के।

भोजन के पश्चात् राजदूत अपनी कार में हमें हमारे होटल में पहुँचा देती हैं। रास्ते में मैं अपना परिचय देने की दृष्टि से उन्हें अपनी उपलब्धियों के बारे में संक्षेप में बताता हूँ।

सन्ध्या के समय सुश्री रोज़ॉलिया अपनी एक सहेली को हमें दोश्ज़ा ग्यर्घ म्यूवैलोदेशी हाज़ (दोश्ज़ा ग्यर्घ सांस्कृतिक भवन) पहुँचाने के लिए भेजती हैं जिसमें कोरोशी चोमा शान्दोर आल्तॉलानौश इश्कोला एश गिमनाज़िउम नामक एक नृत्य विद्यालय के सहयोग से मेरे जन्मदिन के उपलक्ष्य में एक नृत्य प्रस्तुति का आयोजन किया हुआ है। प्रारम्भ में सुश्री रोज़ॉलिया की एक सहेली रोत्लेर इल्दिको द्वारा घर में बनाई गई मिठाई तथा पेय रसों का आस्वाद कराया जाता है। कार्यक्रम एक प्रतिभाशालिनी कन्या दॉन्यी विक्तोरिया के बाली द्वीप के नृत्य से प्रारम्भ होता है। समाप्ति इसकी एक अन्य कन्या की भरतनाट्यम् नृत्य प्रस्तुति से होती है। कार्यक्रम अत्यन्त मनमोहक है। अन्त में सुखद जन्मोत्सव के लिए भरपूर शुभेच्छाओं के साथ हमें पुष्पगुच्छ भेंट किए जोते हैं। यह पहली बार है कि मेरा जन्म दिन भारत से बाहर मनाया जा रहा है और वह भी इतनी अच्छी तरह। मैं और मेरी धर्मपत्नी हम दोनों अभिभूत हैं। हंगरी ने वह किया जो भारत ने गत उनहत्तर वर्षों में कभी नहीं किया। कार्यक्रम को आयोजित करने की पहल और उसे सफल बनाने का यश रोज़ॉलिया को जाता है।

श्री रोहलर इश्तवान, जो एक समाचार-पत्र से जुड़े हैं, ने हमें कुछ प्रश्न पूछने शुरू कर दिए जब हम सभागार में प्रविष्ट हुए।

30-9-1999

प्रातः मैं लेखन कार्य करता हूँ। पिछले कुछ दिन डायरी न लिख सका। इसमें या तो मेरी अतिव्यस्तता कारण रही या मानसिक अनिच्छा ही। कल से मैंने लिखना प्रारम्भ कर दिया है।

11 बजे रोज़ॉलिया अपनी एक बैंक अधिकारिणी सहेली डा. नोरा के साथ आती हैं जो हमें अपनी कार में शाही महल, गिर्जाघर और किले के अवशेष दिखाने ले जाती हैं। मुझे यह ध्यान ही नहीं रहा कि पहले की यात्रा में मैं उन्हें देख चुका था। कोई बात नहीं। दूसरी बार उन्हें देखना

भी उतना ही सुखद था। मै सुश्री रोज़ॉलिया के साथ काफ़ी समय गिर्जाघर में बिताता हूँ जब कि मेरी धर्मपत्नी नोरा के साथ वहीं होती हैं पर उसके एक दूसरे भाग में। सुश्री रोज़ॉलिया हमें बताती हैं कि हंगरी के लोगों की मान्यता है कि ईसा मसीह पार्थियन थे। माता मरियम सूर्य देवता की पूजा करती थीं। उनकी शिक्षा-दीक्षा एक सूर्य मन्दिर में हुई थी। सूर्य पूजा के कारण ही वह शक्ति आई जिससे वह ईसा मसीह को भूलोक में ला सकीं। गिर्जाघर के बारे में वे बताती हैं कि इसके बाहर दिए गए विवरण के अनुसार यह भू-माता का मन्दिर है। सूर्य पूजक और अग्निपूजक मातृशक्ति के पूजक भी हैं। वे मुझे यह भी बताती हैं कि बहुत पहले ही, सन् 1910 में ही, एक संस्कृत-हंगेरियन कोष, संस्कृत-मौद्यार सोतार, ट्रांसल्वेनिया से प्रकाशित हुआ था जो तब हंगरी का ही भाग था। अब इसकी प्रति मिलना कठिन है। एक कला-इतिहासकार पापो इबेर के पुस्तक संग्रह में इसकी एक प्रति थी। द्यैद्यों सैन्त मिकलोश ने हंगेरियन भाषा संरचना पर दो खण्डों का 'मौद्यार न्यैल्व सैरकैज़्तै' शीर्षक एक शोधग्रन्थ प्रकाशित किया था जिसमें हंगेरियन-संस्कृत सम्बन्धों की चर्चा है।

हम फिर से हिल्टन होटल जाते हैं जिसमें पुरातनता और नवीनता का सम्मिश्रण है। पुराने अवशेषों पर नया भवन खड़ा किया गया है। नीचे के तल्लों में पुराने अवशेष दिखाई दे जाते हैं। राजमहल की ओर से बुदापैश्त का भव्य दृश्य सुतराम् आकर्षक है। नदी के पार पैश्त की दिशा में नदी के किनारे-किनारे अनेक मंजिलों के शानदार भवनों की शृंखला है जिनमें संसद् भवन (पार्लियामेण्ट हाउस) भी एक है। उसके विषय में डा. नोरा की टिप्पणी है कि हंगरी एक बड़े संसद् भवन वाला छोटा देश है। उस भवन को देखने के बाद यह टिप्पणी सटीक लगती है।

गिर्जाघर, महल तथा मछुआरों के गाँव को देखने के बाद हम मध्याह्न भोजन के लिए गोविन्द रेस्तराँ में जाते हैं। यह वही रेस्तराँ है जहाँ हमने पूर्व सन्ध्या को भोजन किया था। वहाँ भोजन का सुझाव मेरी धर्मपत्नी का था जिसे तत्काल सुश्री रोज़ॉलिया और डा. नोरा ने स्वीकार

कर लिया। वे मेरी धर्मपत्नी के इस विचार से सहमत थीं कि किसी अन्य रेस्तराँ में शाकाहारी भोजन मिलना आसान नहीं और यदि किसी तरह इसकी व्यवस्था हो भी जाए तो भी हमें खाने में स्वाद नहीं आएगा।

गोविन्द रेस्तराँ में आज का बेयरा कोई और ही था। इसका नाम था पूर्णतत्व। वह हमें बुदापैश्त में हरे कृष्ण मन्दिर के बारे में बताता है जो अपराह्ण में 3 बजे खुलता है। तत्काल ही हमारा विचार बनता है कि मध्याह्न भोजन के बाद वहाँ चला जाए। डा. नोरा हमें वहाँ अपनी कार में ले जाने के लिए तैयार हैं। मन्दिर बुदापैश्त के बाहिरी भाग में है जो कि गोविन्द रेस्तराँ से कार के रास्ते डेढ़ घण्टे की दूरी पर है। जिस समय तक हम मन्दिर में पहुँचते हैं वहाँ काम काज शुरू हो चुका होता है। कीर्तन चल रहा होता है। भक्तजन एक-एककर आ रहे होते हैं। कुछेक के साथ उनके छोटे-छोटे बच्चे भी होते हैं जिनके गीतगोविन्द, पद्मा जैसे संस्कृत के नाम हमें रोमांचित कर देते हैं। मन्दिर में, जोकि एक प्राइवेट घर है, मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। लगभग आधा घण्टा वहाँ बिता हम अपने होटल की ओर रुख करते हैं।

5 बजे पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार एक महिला हमें डा. मारिया न्येजेशी के घर ले जाने के लिए आती हैं। वे अपनी माँ के अपार्टमेण्ट में हमसे मिलती हैं। अलग से भी उनका अपना एक अपार्टमेण्ट है जोकि उसी बिल्डिंग में ऊपरी भाग में है। माँ जर्जर शरीर की 76 वर्षीय महिला हैं। एक टाँग उनकी कटी है और वे व्हील चेयर में हैं। वे केवल हंगेरियन ही बोलती हैं। मारिया उनके दुभाषिये का काम करती हैं। यद्यपि वे अनेक रोगों से घिरी हैं तो भी वे प्रसन्नता की प्रतिमूर्ति हैं। उन्होंने यह व्रत धारण किया हुआ है कि वे हर परिस्थिति में प्रसन्न रहेंगी। हम आए इसके लिए वे कृतज्ञ हैं और आशा करती हैं कि शीघ्र ही हम पुनः आएँगे। जब मेरी धर्मपत्नी कहती हैं कि उन्होंने अपनी पुत्री (मारिया न्येजैशी) भारत को दे दी है तो वे कहती हैं कि ठीक यही आशंका उनकी है कि एक बार यदि वे भारत गईं तो वहीं की होकर रह जाएँगी। उनके इन शब्दों से हम सभी लोग ठठा कर हंस पड़ते हैं।

डा. लक्ष्मण सिंह बिष्ट को भी मारिया ने निमन्त्रित किया है। कुछ समय के लिए वार्तालाप हिन्दी-उर्दू के परस्पर सम्बन्धों पर केन्द्रित हो जाता है। सुश्री मारिया कहती हैं कि विभाग में कोई उर्दू अध्यापक नहीं है। उनके अनुरोध पर कि ऐसा अध्यापक होना चाहिए जो हिन्दी और उर्दू इन दोनों को पढ़ा सके डा. असगर वजाहत को भेजा गया था। "वे एक सुप्रसिद्ध उर्दू उपन्यासकार हैं", बीच में बोल उठते हैं डा. बिष्ट डा. वजाहत की विशेषज्ञता के बारे में प्रश्न के उत्तर में। वे बुदापैश्त में पाँच साल थे। बिष्ट का यह तीसरा साल चल रहा है। इनकी भी इच्छा है कि उनका कार्यकाल भी बढ़ जाए उतने समय तक के लिए। उन्होंने लण्डन में हुए विश्व हिन्दी सम्मेलन में भाग लिया था। मैं उनसे उस सम्मेलन की जानकारी प्राप्त करना चाहता हूँ। मारिया उन विदेशी हिन्दी विद्वानों में थीं जिन्हें वहाँ सम्मानित किया गया था।

प्रारम्भ में कार्यक्रम था कि हम मारिया के पास चार बजे अपराह्ण में आएँगे। बाद में यह सोचा गया कि दर्शनीय स्थानों को देखने में अधिक समय लगता है जिससे निश्चित समय पर पहुँचने में हमें विलम्ब हो सकता है। इसलिए यह निश्चय किया गया कि निश्चित समय एक घण्टा पीछे सरका दिया जाए। सुश्री रोज़ॉलिया ने इस सम्बन्ध में मारिया से सम्पर्क करने का जिम्मा अपने पर लिया। प्रातः 8.15 बजे मारिया ने टेलीफोन पर बताया कि सन्ध्या के 5 बजे उन्हें पूरी तरह अनुकूल है। इसके पहले उन्होंने कहा था कि वे हमें पूर्वदिन में सूचित करेंगी। हो सकता है कुछ समय के लिए वे आ सकें। हमें उनका कोई दूरभाष सन्देश नहीं प्राप्त हुआ और न ही वे आईं। आज प्रातः सफ़ाई देती हुई वे बोलीं कि कल प्रातः 10 बजे वे खरीददारी करने निकल गई थीं। आप माने या न मानें, रात के नौ बजे लौटना हो पाया। दो-तीन बड़े-बड़े स्टोर हैं। उनमें पूरे महीने की या दो महीनों की खरीददारी के लिए कभी-कभार ही जाना होता है। इससे उन्हें हमें टेलिफोन करने का समय भी नहीं मिला। उन्हें लगा हमने बुरा माना होगा। मैं उन्हें आश्वस्त करता हूँ कि ऐसी कोई बात

नहीं। मुझे योरुप का जीवन कैसा होता है इसका अनुभव है। वे तब कुछ चिन्तन की मुद्रा में लगती हैं। वे सात वर्ष की थीं जब उनके माता-पिता का सम्बन्ध विच्छेद हो गया। उनके जीवन में बिखराव आ गया। कभी वे अपनी दादी के पास रहती थीं, कभी मौसी के पास तो कभी माँ के पास। और कभी सम्भवतः 15 या 20 दिन के बाद, पिता के पास। उन्हें यह पता नहीं होता था कि किसके यहाँ रात बितानी है। इस समय उन्हें दो वृद्ध महिलाओं की देखभाल करनी होती है, माँ की और मौसी की। वे कहती हैं—मैं अब थक गई हूँ। यही शब्द वे तीन बार दोहराती हैं। वे अभी 46 वर्ष की हैं और उनमें थकावट के चिह्न दिखाई देने लगे हैं। उनकी आत्मकथा से मेरे मन में अनेक प्रश्न उभरने लगते हैं। यह आत्मकथा योरुप के समाज के टूटे परिवारों तथा वहाँ के बच्चों के टूटे जीवन की करुण कथा है जिससे अब भारत भी अस्पृष्ट नहीं रहा। मैं अपने उन धर्मशास्त्रों के रचयिता प्राचीन ऋषियों के प्रति नतमस्तक हूँ जिन्होंने बहुत ही कठिन परिस्थितियों के सिवाय तलाक की अनुमति नहीं दी। इसने हज़ारों साल तक बच्चों को मातृ-पितृ-विहीन जीवन बिताने की मानसिक यन्त्रणा से बचाए रखा, वह जीवन जहाँ भावनात्मक लगाव की ऊष्मा नहीं रहती। माता-पिता और बच्चों के बीच के बन्धन आज भी भारत में सुदृढ़ हैं।

योरुप में वयस्क बच्चे, भले ही वे अविवाहित हों, माता-पिता के साथ रहते हों, इसे कोई सोच भी नहीं सकता। श्री गैर्गेय हिदॉश ने भी वही बात कही जब उनसे पूछा गया कि वे कहाँ रहते हैं। बच्चों में सबसे बड़े होने पर भी वे अविवाहित हैं। वे अलग से एक कमरे का अपार्टमेण्ट लेकर रहते हैं। योरुप में वयस्क बच्चे अपने माता-पिता के साथ नहीं रहते हैं, वे कहते हैं। उनके वचन डा. नोरा के वचनों की ही प्रतिध्वनि हैं, जब उन्होंने मेरी पत्नी के मूर्खतापूर्ण प्रश्न पर कि क्या वे अपने माता-पिता के पास रहती हैं कहा था—हम वयस्क लोग हैं, माता-पिता के साथ नहीं रहते हैं। इस उत्तर से मेरी पत्नी अपना-सा मुँह लेकर रह गई थीं।

1-10-1999

गत दिन श्री गैर्गेय ने कार्यान्तर में व्यस्त होने के कारण भारतीय विद्या के एक अन्य छात्र आदाम से मेरा सम्पर्क करा दिया था। आदाम को ही मेरे लिए एक दन्तचिकित्सक की तलाश करनी थी। प्रातः 9 बजे के लगभग उसका दूरभाष सन्देश मुझे प्राप्त हुआ कि उसने मेरे लिए एक दन्तचिकित्सक से समय लिया है पर मुझे बहुत जल्दी करनी होगी क्योंकि निर्धारित समय (एप्वाइंटमेंट) में मात्र 40 मिनट शेष हैं। समय कम होने के कारण उसका सुझाव था कि अच्छा हो मैं टैक्सी ले लूँ और दन्तचिकित्सक की क्लिनिक में पहुँच जाऊँ, जिसका नाम और पता उसने स्वागताधिकारिणी को लिखा दिया था इस अनुरोध के साथ कि वे मेरे लिए टैक्सी बुला दें और क्लिनिक का पता ड्राइवर को बता दें। मैं क्लिनिक में पहुँच जाता हूँ पर आदाम को वहाँ न देख घबरा जाता हूँ। थोड़ी देर में आदाम वहाँ पहुँच जाता है और दन्तचिकित्सिका को मेरे विषय में बताता है जोकि बहुत अच्छी तरह से अंग्रेज़ी बोल लेती हैं। मैं उन्हें अपना परिचय देता हूँ। साथ में यह भी बताता हूँ कि हंगरी से मुझे बहुत प्यार है जिसका प्रमाण है मेरा शान्दोर वरश की कविताओं का संस्कृतानुवाद जिससे वे बहुत प्रभावित होती हैं। मैं उन्हें यह भी बताता हूँ कि मैं हंगरी की अल्पकालीन यात्रा पर हूँ और मेरे पास स्वास्थ्य बीमा (हैल्थ इंशुरेंस) नहीं है। वे मेरा दन्त परीक्षण करती हैं। एक दाँत जिसमें समस्या थी, की वे सफ़ाई करती हैं और फिर से उस पर 'क्राउन' जमाने के बाद वे पाती हैं कि यह टूटा हुआ है। वे मुझे कहती हैं कि मैं इसके बारे में अधिक सावधानी बरतूँ। कुछ भी चीज़ इससे चबाऊँ नहीं। वे कहती हैं कि इस पर का क्राउन केवल तीन या चार दिन तक ही टिक सकेगा, दाँत की जो स्थिति है उसके चलते। मैं उनसे कहता हूँ कि वे ऐसा कुछ करें कि 'क्राउन' दस दिन काट जाए—मुझे अभी सम्मेलन में भाग लेना है। वे मान जाती हैं। वे क्राउन एक नए तरीके से जमा देती हैं। यह जानकर कि मैं एक 'विजिटर' हूँ वे मुझसे फ़ीस नहीं लेतीं जिस कारण आदाम उनका भूरि-भूरि धन्यवाद करता है। उसका यह व्यवहार मुझे कहीं गहरे तक छू जाता है। मैं यह



अतवश लोरान्द विश्वविद्यालय, बुदापैश्त की भारतीय विद्या विभाग की अध्यक्षा, डा. मारिया न्येजैशी से गहन विमर्श में लीन प्रो. सत्यव्रत शास्त्री



अपने रामायण के हंगेरियन अनुवाद की प्रति
प्रो. सत्यव्रत शास्त्री को भेंट करते हुए प्रो. योझैफ़ वैकैर्दी

कल्पना भी नहीं कर सकता कोई दन्तचिकित्सक भारत में किसी विदेशी के साथ इतना सौहार्दपूर्ण व्यवहार करे। पर यह हंगरी देश है, भारत देश नहीं।

क्लिनिक से बाहर आने पर आदाम कहता है कि 11 बजे उसकी कक्षा है इसलिए वह मुझे मेरे होटल 'होटल मोरोश', जहाँ मैं ठहरा हुआ हूँ, में मुझे नहीं पहुँचा सकता। अच्छा यही होगा कि विभाग के सौजन्य से (टैक्सी का भाड़ा विभाग द्वारा देय होगा) तत्काल के लिए मैं टैक्सी कर लूँ। वह मुझे 2000 फ़ोरिन्त देता है यह कहते हुए कि इसका हिसाब-किताब वह सुश्री मारिया से बाद में कर लेगा।

जैसा कि पहले से तय था सन्ध्या के पाँच बजे प्रो. योझैफ़ वैकैर्दी आते हैं। मैं स्वागतकक्ष में उनसे मिलता हूँ। हम एक दूसरे से गले मिलते हैं। जो उपहार वे मेरे लिए लाए हैं उससे मैं अभिभूत हूँ। चन्द मिनट बाद श्री गैर्गेय हम लोगों में शामिल हो जाते हैं। प्रो. वैकैर्दी को सुनने में कठिनाई होती है। वे लगभग बहरे हो चुके हैं। श्री गैर्गेय से आशा की जाती है कि वे मेरी बात हंगेरियन में उन तक पहुँचा देंगे जिसे समझना उन्हें सुकर है। प्रो. वैकैर्दी अपने रामायण के हंगेरियन अनुवाद की प्रति मुझे भेंट करते हैं। वे कहते हैं कि इसमें निदर्शनार्थ चित्र थाईलैण्ड से हैं। उनका प्रकाशक जिसे वे अपना पारिवारिक प्रकाशक कहते हैं, बुदापैश्त में थाई वस्तुओं के विक्रेता है, जैसे कि चित्र, वायाङ् मुखौटे, अगरबत्ती आदि। इस कारण उसने निदर्शनार्थ रेखाचित्र थाईलैण्ड से दिए हैं। मेरे इन्दिरागान्धीचरितम् के बारे में वे बताते हैं कि उन्होंने हंगेरियन में इसकी समीक्षा लिखी है जिसके अंग्रेज़ी अनुवाद की प्रति उन्होंने मुझे भेजी थी। वह मुझे मिल गई है, मैं कहता हूँ। मैं उनसे पूछता हूँ कि इसका हंगेरियन मूल कहीं छपा है—वे कहते हैं, हाँ और उसका हंगरी की एक पत्रिका से प्राप्त अनुमुद्रण मुझे दिखाते हैं। उन्हें अचरज होता है जब मैं कहता हूँ कि आगे से वे अपने सभी लेखों को पंजीकृत डाक से भेजा करें, क्योंकि सामान्य डाक में पत्र इधर-उधर हो जाते हैं। वे मुझे यह भी बताते हैं कि उन्होंने इन्दिरागान्धीचरितम् के चुनिन्दा अंशों का हंगेरियन में अनुवाद भी

किया है। वे कहते हैं कि मेरी कृति सन् 1976 में प्रकाशित हुई थी। उसमें सन् 1975 तक का ही इन्दिरा गान्धी का जीवन वृत्त दिया है। उसके कुछ वर्ष बाद तक भी वे जीवित रहीं, अपनी हत्या तक। उनका सुझाव है कि इस महाकाव्य में कुछ सर्ग और जोड़ दिए जाएँ जिनमें सन् 1975 के बाद के मृत्यु तक के श्रीमती इन्दिरा गान्धी के जीवनवृत्त का भी वर्णन हो। इससे भी वे कुछ अंश चयनित कर हंगेरियन में उनका अनुवाद करना चाहेंगे जिससे कथानक पूर्ण हो जाएगा। मैं उनके विचार से सहमत हूँ। वे कहते हैं कि वे इसके (इन्दिरागान्धीचरितम् के) हंगेरियन अनुवाद के प्रकाशन के बारे में अपने प्रकाशक से बात करेंगे। यदि वह मानता है, तो वे चाहेंगे उसके लिए आशीर्वचन मैं ही लिखूँ जोकि अंग्रेज़ी में होने पर भी चलेंगे। उनकी यह इच्छा मुझे कहीं गहरे तक छू जाती है।

इन्दिरागान्धीचरितम् के बारे में बातचीत को आगे बढ़ाते हुए वे कहते हैं कि उन्हें इससे राजनैतिक लाभ हुआ। दो या तीन वर्ष पूर्व उन्होंने हंगेरियन देशभक्त पार्टी मौ इ ए ए पा (मौद्यार) इगाज़शाग एश एलैत पार्तयॉ (पार्टी) की हंगेरियन न्याय और जीवन विषयक एक बैठक में भाग लिया। वहाँ उन्होंने कहा कि उन्होंने हाल ही में इन्दिरा गान्धी पर लिखी गई एक संस्कृत कृति के अंशों का हंगेरियन में अनुवाद किया है। उन्होंने अपने देश के हित के लिए तीन काम किए। उन्होंने अमेरिका का आर्थिक प्रभुत्व अपने देश पर नहीं होने दिया जो कि सम्प्रति सब जगह दृष्टिगोचर हो रहा है। उन्होंने सम्पत्ति के कुछ ही लोगों तक सिमट जाने के कारण जो हुआ करता है वह नहीं होने दिया, और वह है अमीर और अमीर होते जाएँ और गरीब और अधिक गरीब। उन्होंने अपने देश का आधुनिकीकरण तो किया पर संस्कृति और परम्परा को दाँव पर लगाकर नहीं। इसके बाद उन्होंने हंगेरियन अनुवाद में इन्दिरागान्धीचरितम् से एक पद्य सुनाया, जिसमें उन्होंने अनुवाद में भी मूल संस्कृत छन्द को ही अपनाया था। अपनी बात को जारी रखते हुए उन्होंने कहा कि मैंने बैठक में यह कहा कि लगता है कि चिता पर से, जब श्रीमती गान्धी के पार्थिव शरीर को उस पर रखा गया, उनकी आत्मा उड़कर अर्थशास्त्र के प्रोफेसर तथा पार्टी के

आर्थिक मामलों के विशेषज्ञ एलिसेबेत गिदई में प्रवेश कर गई क्योंकि वे उस महान् भारतीय नेता की नीतियों का ही अनुसरण कर रहे हैं। इस पर लोगों की हँसी फूट निकली थी।

मौ इ ए ए पा मध्यम मार्ग का अनुसरण करती है। वह साम्यवादियों एवंच उदारवादियों के विपरीत सरकार के प्रति रचनात्मक विपक्ष की भूमिका निभाती है। वे उन्हीं शब्दों के साथ इस विषय को समाप्त करते हैं जिससे उन्होंने शुरू किया था। देखिए मैंने इन्दिरागान्धीचरितम् से लाभ उठा लिया। मेरे पूछने पर वे बताते हैं कि उन्होंने 72 वर्ष पूरे कर लिए हैं और 73 वें में प्रवेश किया है। मैं उनसे कहता हूँ कि वे मुझसे तीन वर्ष बड़े हैं। मैं उन्हें बताता हूँ कि मैंने 29 सितम्बर को 70 वें वर्ष में प्रवेश किया है। वे मुझसे कहते हैं कि आप दोनों अर्थों में शास्त्री हैं। अध्यापक के अर्थ में भी (जो शास्त्रों को जानता है) और उपनाम के अर्थ में भी। मैं उनसे कहता हूँ कि आप एक ऋषि हैं। वे कहते हैं कि वे इस सम्मान के अधिकारी नहीं हैं। उनकी बात न मानते हुए मैं कहता हूँ आप इसके कहीं अधिक बढ़कर अधिकारी हैं।

कल राजदूत ने डा. वैकैर्दी की भारत यात्रा का विषय छेड़ा था और मैंने उनसे कहा था उनके एक प्रश्न के उत्तर में कि उनके भारत आने पर हवाई अड्डे से हवाई अड्डे तक का जिम्मा मेरा रहेगा (नई दिल्ली हवाई अड्डे पर उनकी अगवानी से लेकर उनकी यात्रा समाप्त होने पर हवाई अड्डे पर उन्हें विदा देने तक)। यात्रा में नियमित रूप से मैं उनके साथ रहूँगा। उन्होंने मुझे बताया कि उनकी भारत-यात्रा के विषय में उन्होंने मानव संसाधन विकास मंत्री डा. मुरलीमनोहर जोशी की स्वीकृति ले ली है। उन्होंने इसकी भी स्वीकृति दी है कि उनके साथ कोई व्यक्ति सहायता के लिए आ सकता है। वे मुझे उनका मन जानने के लिए कहती हैं।

मैं उन्हें कहता हूँ कि प्रो. वैकैर्दी जाने के लिए बहुत उत्सुक नहीं हैं। वे बहुत वृद्ध हो गए हैं और सुनने में भी उन्हें कठिनाई होती है पर एक सप्ताह के लिए जाने के लिए उन्होंने मान लिया है। मैं पूछता हूँ कि क्या एक सप्ताह से बढ़ाकर दस दिन कर दिए जाएँ या केवल सात दिन ही

ठीक रहेंगे। सात दिनों में हम केवल पाँच-एक स्थानों पर जा पाएँगे। जबकि दस दिनों में सात-आठ स्थानों पर। तब मैं उन स्थानों की चर्चा करता हूँ जहाँ जाना उनके लिए लाभप्रद हो सकता है। वे हैं—कुरुक्षेत्र, आगरा, वाराणसी, प्रयाग। ये केवल सात दिनों के लिए हैं। यदि यात्रा दस दिन की है तो इसमें उज्जैन और मुम्बई को भी शामिल किया जा सकता है।

मुझे स्वागत कक्ष से दूरभाष से सूचना प्राप्त होती है कि प्रो. वैकैर्दी लॉबी में प्रतीक्षा कर रहे हैं। मैं तुरन्त उनसे मिलने पहुँचता हूँ। हम एक दूसरे को बाहुपाश में बाँध लेते हैं। मैं उन्हें अपने कमरे में ले आता हूँ। एक बहुत बड़े पुष्पगुच्छ के साथ मेरी पत्नी उनका स्वागत करती हैं जिसे वे बहुत पसन्द करते हैं। मेरी पत्नी कहती हैं—अहं भवतां गृहे आगमनेन अतीव प्रसन्नास्मि। इसके उत्तर में वे कहते हैं—अहं पुस्तकेषु यानि वाक्यानि लिखितानि तानि वक्तुं शक्नोमि।

बातचीत के दौरान मैं अपने पत्रकाव्यम् की एक प्रति उन्हें भेंट करता हूँ। एकदम से वे नहीं समझ पाते हैं कि यह किस तरह का काव्य होगा। पत्र तो पत्ता होता है। तब मैं उन्हें कहता हूँ कि पत्र का एक अर्थ लैटर भी होता है और मेरी कृति उन संस्कृत पद्यात्मक पत्रों का संग्रह है, जो मैं समय-समय पर अपने मित्रों, परिचितों और बंधुओं को लिखता रहा हूँ और जिनकी प्रति उन्हें भेजने से पूर्व मैंने बना ली थी। इन पत्रों की संख्या 124 है और इनमें रचे हुए पद्यों की 2222। इनमें एक पत्र 137 पद्यों का है जोकि संस्कृत वाङ्मय का पद्यों में लिखा दीर्घतम पत्र कहा जा सकता है। अपने ढंग की इस तरह की पहली कृति होने के कारण मेरा काव्य संस्कृत वाङ्मय में एक नवीन विधा का प्रवर्तन करता है। अलग-अलग स्थानों से लिखे गए पत्रों में अनेक प्रकार की उपयोगी सूचना है जैसे कि बैल्जियम के ल्यूवेन से लिखे गए पत्र में वहाँ के प्राच्य विद्या संस्थान का इतिहास अथवा बैंकाक से लिखे गए पत्र में थाईलैण्ड में ही मिलने वाले एक विशेष प्रकार के फलों का विवरण। लगभग डेढ़ घंटा मेरे साथ बिताने के बाद प्रो. वैकैर्दी विदा लेते हैं। मैं मुख्य मार्ग तक उन्हें छोड़ने जाता हूँ।

हम दो बार एक दूसरे के गले मिलते हैं। दोनों के दिल भरे हुए हैं—दो अलग-अलग महाद्वीपों के बड़ी उम्र के व्यक्ति संस्कृत भाषा और वाङ्मय के प्रेम के एक ही धागे से बँधे हुए। मैं उदास-सी मुद्रा में अपने कमरे में वापस आता हूँ। हम दोनों ही बूढ़े हो चले हैं। कौन जानता है कि हम कभी मिल पाएँगे या नहीं। हमारी बातचीत अभी चल ही रही थी कि मेरी धर्मपत्नी बीच में ही उठकर जीव-शक्ति के एक चिकित्सक से मिलने चल दीं, जिनसे रोज़ॉलिया ने मिलने का समय निश्चित किया हुआ था। रात्रि के 8 बजे भारतीय दूतावास के श्री दास ने भोजनार्थ अपने घर हमें ले जाना था जिसके लिए उन्होंने समुद्री जीव विज्ञान के प्रोफेसर श्री दामोदरन् को भी बुलाया हुआ था। वे सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम के अन्तर्गत इक्कीस दिन की हंगरी यात्रा पर हैं। यद्यपि बॉलॉतोन झील के दक्षिण की ओर के एक अतिथिगृह में उनकी आवास की व्यवस्था है, पर कुछ समय के लिए वे उसी होटल में रहेंगे जहाँ हमें रखा गया है। भोजन का कार्यक्रम बहुत अच्छी तरह चलता है। श्री दास ने बहुत से लोगों को बुला रखा था जिनमें अनेक लेखा-परीक्षक थे जोकि दूतावास के हिसाब-किताब की जाँच के लिए लण्डन से बुदापैश्त आए हुए थे और अपने कार्य की समाप्ति पर लौटने ही वाले थे। निमन्त्रितों में दो शिक्षा क्षेत्र के भी थे, एक कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के श्री एस. के. आर्य और दूसरी उत्तरी बंगाल विश्वविद्यालय के दर्शन विभाग की डा. मंजुलिका घोष जोकि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के दीर्घकालीन सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम के अन्तर्गत आई हुई थीं। भोजन के समय बातचीत का मुख्य बिन्दु विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा हंगरी में भेजे गए शोधार्थी विद्वानों को भत्ते के रूप में दी जाने वाली राशि था। उन्हें 600 फ़ोरिन्त एक दिन का दिया जाता है जोकि हंगरी में आवश्यक वस्तुओं के बहुत महँगे होने के कारण बहुत ही कम है। रोज के 600 फ़ोरिन्त किसी भी तरह स्वीकार्य नहीं है। शाकाहारी होने के कारण डा. आर्य को बुदापैश्त प्रवास अच्छा नहीं लग रहा था। वे इतने अधीर हो गए थे कि दो महीने के बाद ही, जो उन्हें वहाँ किसी-न-किसी तरह बिताने थे, भारत लौटने के पक्ष में थे। डा.

घोष की सोच अलग थी। वे पूरे पाँच महीने बिताने के लिए कृतसंकल्प थीं।

भोजन समाप्ति पर श्री दास हमें अपनी कार में होटल पहुँचा देते हैं। और इसके साथ ही हमारी हंगरी यात्रा का एक और रोचक दिन समाप्त होता है।

2-10-1999

प्रातः 10 बजे श्री गैर्गेय हिदॉश एक बौद्ध संस्कृत ग्रन्थ की पाण्डुलिपि लेकर आते हैं। इसके पाठ में कतिपय समस्याएँ हैं। वे उन पर मुझसे विचार-विमर्श करते हैं। बहुत सी जगह मुझे समाधान सूझ जाता है। दो या तीन स्थल अधिक जटिल हैं। उन पर विचार करने के लिए मुझे समय अपेक्षित है। ऐसा लगता है कि पाठ वहाँ सुतरां भ्रष्ट हो गया है।

सन्ध्या के समय सुश्री रोज़ॉलिया हमें भोजनार्थ गोविन्द रेस्तराँ में ले जाती हैं। तीन अन्य युवाओं को भी उन्होंने वहाँ निमन्त्रित किया हुआ है। रेस्तराँ का संचालन इस्कोन्स की हंगेरियन शाखा के हाथ में है। डेन्यूब नदी के किनारे स्थित इस रेस्तराँ की गुलाबी रंग में अपने ढंग की साज-सज्जा है। इसकी दीवारें भगवान् कृष्ण के विविध रूपों के चित्रों से सुसज्जित हैं। पुरी के भगवान् जगन्नाथ के रूप में, वृन्दावन में गोपियों के साथ रासलीला करते भगवान् कृष्ण के रूप में इत्यादि। भूमितल के एक ओर कुछ ऊँचाई पर श्रीमद्भगवद्गीता और श्रीमद्भागवतपुराण की प्रतियाँ हरे कृष्ण सम्प्रदाय के अन्य संबद्ध साहित्य के साथ रखी हुई हैं। बेयरों ने यद्यपि पेण्ट पहन रखी है तो भी वे तुलसी की माला पहने हैं और उन सबका वैष्णवों का जो नाम हुआ करता है वही है। जो बेयरा हमें भोजन परोस रहा था उसका नाम था गुणग्राहिदास। भोजन पूरी तरह शाकाहारी था और जैसा भारत में हुआ करता है उसी तरह का था। इसमें पूरी, भाजी इत्यादि व्यंजन थे। वहाँ भोजन थालियों में परोसने की प्रथा है। आवश्यकतानुसार छोटी या बड़ी। सधी-सधाई व्यंजन-सूची है—मिश्रित



बुदापैश्त का गोविन्द रेस्तराँ (प्रवेश द्वार)



बुदापैश्त का गोविन्द रेस्तराँ (भीतरी भाग)

सब्ज़ियाँ, दाल, चावल (मीठे), चावलों का एक गोला, एक बड़े आकार का पकौड़ा और एक पूरी। मिष्टान्न के रूप में हलवा। क्योंकि यह सभी के लिए एक समान है इसलिए व्यंजन सूची का कार्ड वहाँ नहीं रहता। पीने के लिए वहाँ या तो लस्सी है या गुलाबजल या अदरक का शरबत। भोजन की समाप्ति पर अदरक की चाय परोसी जाती है। लिप्टेन की चाय या कॉफी वहाँ नहीं है। हरे कृष्ण सम्प्रदाय के लोगों में उसका चलन नहीं है। रेस्तराँ अच्छा चलता हुआ दिखता है। हम देखते हैं कि हमारे आस-पास भोजनार्थी हैं जो सभी-के-सभी हंगेरियन हैं। रेस्तराँ के प्रवेश द्वार पर ही भगवान् कृष्ण की मूर्ति है। हम रेस्तराँ के अनेक चित्र लेते हैं और भोजन पर जो हमारे साथ हैं उनके भी। मैं और मेरी पत्नी यह देखकर कि बुदापैश्त के बीचोंबीच ऐसा रेस्तराँ है जिसने भारतीयता को पूर्णतया अपना लिया है, बहुत ही प्रसन्न होते हैं। हरे कृष्ण सम्प्रदाय का ही यह कमाल है कि बुदापैश्त जैसे नगर में इस तरह का रेस्तराँ स्थापित हो सका।

भोजन के दौरान सुश्री रोज़ॉलिया ने चर्चा की कि उसकी योजना है कि अगले वर्ष ग्रीष्मकाल में, जुलाई 1 से 31, 2000 के बीच, एक रामायण समारोह का आयोजन किया जाए। यह 1 महीने का इस तरह का शिबिर होगा जिसमें इसमें रुचि रखने वाले प्रतिभागियों को भारतीय संस्कृति का, विशेषकर हिंदू सांस्कृतिक परंपराओं का, व्यापक परिचय दिया जाएगा। हम उन विषयों के बारे में भी चर्चा करते हैं जिन पर विशेषज्ञों द्वारा भाषण अथवा प्रतियोगिताएँ आयोजित की जा सकती हों। मैं सबेरे भोजन के साथ आए छात्रों, एक लड़का और दो लड़कियों, से सुझाव माँगता हूँ। वे कुछ सुझाव देते हैं जिनके साथ मैं अपने कतिपय सुझावों का संयोजन करता हूँ। 16 विषय उभरकर आते हैं। जिसका अर्थ है कि कुल मिलाकर 20-25 भाषण। कुछ भाषण हैं जिनके लिए एक से अधिक भाषण या प्रवचनों की आवश्यकता होगी। सुश्री रोज़ॉलिया कहती हैं कि उत्सव—वे उसे उत्सव कहना अधिक पसन्द करती हैं—का अवसर

उनकी रामायण के चित्रों की पुस्तक के तथा हंगरी के एक मिथक पर आधारित सूर्य देवता तथा एक हंगेरियन देवी की विवाह शीर्षक पुस्तक के विमोचन के लिए भी उपयुक्त रहेगा। उन्हें आशा है कि बाहर से आने वाले अतिथियों के लिए बुदापैश्त में महीने-भर तक के लिए निःशुल्क रहने की व्यवस्था वे कर पाएँगी।

मैं सुश्री रोज़ॉलिया से हम दोनों की गीतगोविन्द-योजना के विषय पर भी चर्चा करता हूँ। वे बताती हैं कि उस कृति के 12 भागों पर उन्होंने 12 चित्र बनाए हैं—हर भाग पर एक—जो उनके पास तैयार हैं। गीतगोविन्द की प्रस्तुति के समय वे उन्हें या उनकी फ़ोटोकापियाँ मुझे देंगी। यात्रा के समय उनका मेरे साथ रहना आवश्यक नहीं है। उनके पास इसके लिए समय नहीं है। उनका सुझाव है कि आगामी वर्ष का उत्सव गीतगोविन्द की प्रस्तुति प्रारम्भ करने का अवसर भी हो सकता है।

रात गहराती जा रही थी। हम होटल वापस हो लेते हैं। इस प्रकार हंगरी में हमारे सफल प्रवास का एक और दिन बीत जाता है।

अगले दिन सुश्री रोज़ॉलिया के एक मित्र की कार में किला, राजमहल और गिर्जाघर को देखने का हमारा कार्यक्रम है जोकि सुश्री रोज़ॉलिया के अनुसार हर दृष्टि से देखने योग्य हैं। पहाड़ी पर चित्रों का एक प्रसिद्ध संग्रह है।

4-10-1999

श्री गैर्गैय हिदॉश ने हंगेरियन लेखक संघ की उपाध्यक्षा और हंगरी की एक सुप्रसिद्ध कवयित्री एवा तोथ से 1.30 बजे मध्याह्न भोजन पर हमारे मिलने का समय तय किया था। वे निश्चित समय पर हमें श्रीमती तोथ के पास ले जाते हैं जो कि हमें 'इन् मैमोरियम' शीर्षक की अपनी पुस्तक भेंट करती हैं। यह अत्यन्त आकर्षक ढंग से प्रकाशित है। यह एक काव्य-संग्रह है जो 13 विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित है। इसमें साहित्य अकादमी के श्री गिरिधर राठी का हिन्दी अनुवाद भी शामिल है जिसमें अनुवाद के साथ हंगेरियन मूल भी दिया है—पृष्ठ के एक ओर हिंदी



दैब्रैत्सैन विश्वविद्यालय



लेखक और उनकी धर्म पत्नी के साथ डा. बीरो अपनी क्लिनिक में।
दीवार पर टँगे हैं रहस्यात्मक चित्र

अनुवाद और दूसरी ओर हंगेरियन मूल। श्रीमती तोथ भारत आ चुकी हैं। उनके बहुत से मित्र भी वहाँ हैं।

मध्याह्न भोजन के बाद वे हमें लेखकसंघ (P.E.N) भवन के अलग-अलग प्रखण्डों में ले जाती हैं जिनमें से एक खण्ड में पुस्तकालय है जो अपने विशाल पुस्तक संग्रह से हमें बहुत प्रभावित करता है।

अपराह्ण में 4 बजे सुश्री रोज़ॉलिया अपनी दो सहेलियों के साथ आती हैं जिनमें एक लिप्ताक सुसन्ना हैं जो दॉन्यी विक्तोरिया नाम की उस लड़की की माता है जिसने मेरे जन्मदिन पर बाली का नृत्य प्रस्तुत किया था। इसी बीच वहाँ श्री पेतैर हॉयतो आ निकलते हैं। वे अपने जीवनवृत्त-परिचय की प्रति हमें देते हैं और वार्सा के लिए और वहाँ से भारत की यात्रा के लिए हमें अपनी शुभकामनाएँ अर्पित करते हैं। मैं भी स्वागत कक्ष में हिसाब-किताब चुकता करता हूँ। श्री गैर्गेय के बीच में पड़ने के कारण स्वागत कक्ष की महिला अधिकारी 900 फ़ोरिन्त प्रतिदिन के हिसाब से हमें छूट (discount) देती हैं जोकि हमारे लिए बहुत बड़ी राहत है।

उसके बाद हम सभी डा. बीरो की क्लिनिक के लिए चल देते हैं जहाँ हम, विशेषकर मेरी पत्नी, आर्थाराइटिस से पीडित अपने घुटनों का बायोएनर्जी द्वारा इलाज करवाते हैं। क्लिनिक पहुँचने पर सुश्री रोज़ॉलिया की दो सहेलियाँ हमसे विदा लेती हैं और हम तीनों, मैं, मेरी पत्नी और सुश्री रोज़ॉलिया क्लिनिक में प्रवेश करते हैं। इलाज प्रारम्भ करने से पूर्व डा. बीरो हमें बताते हैं कि कैसे जीव-संजीवनी अपना काम करती है। यह वैश्विक शक्ति है, वे कहते हैं। पहले अपने अन्दर संकल्प-शक्ति पैदा करनी होती है फिर इसके लिए विचार-शक्ति की आवश्यकता पड़ती है। तीसरी सीढ़ी है भावनाओं की। इन तीनों के द्वारा यह शरीर में प्रवेश करती है। जीवशक्ति की व्याख्या करने के बाद वे कहते हैं कि हम हथेलियाँ ऊपर कर दें और शरीर को ढीला कर दें। हाथ के द्वारा शक्ति पहले प्रवेश करती है। इसके द्वारा वे कुछ शब्दों का अस्फुट उच्चारण करते हैं जो पूरी तरह सुनाई नहीं देते हैं। उनके विषय में निश्चित रूप से

कुछ कहा नहीं जा सकता। लगता है वह एक शक्ति मंत्र है। इसके बाद वे हाथों और उँगलियों को संचालित करते हैं जैसा कि तांत्रिक विभिन्न मुद्राओं के रूप में किया करते हैं। मैं हथेलियों में कुछ सनसनाहट महसूस करता हूँ। मेरे लिए यह एक सर्वथा नया अनुभव है। डा. बीरो की क्लिनिक की दीवारों पर अनेक चार्ट और ग्राफ़ एवंच रहस्यात्मक आकृतियाँ बनी हुई हैं।

उपचार समाप्त हो जाने पर सुश्री रोज़ॉलिया टैक्सी में हमें होटल पहुँचा देती हैं। उस समय रात्रि के आठ बज चुके होते हैं।

5-10-1999

हमारे कार्यक्रम के अनुसार श्री गैर्गैय प्रातः 7 बजे हमें एयरपोर्ट पहुँचाने के लिए आते हैं। आप्रवासी औपचारिकताओं के समाप्त हो जाने पर वे हमसे विदा लेते हैं। यह एक भावुक क्षण है। हमारी सम्पूर्ण बुदापैश्त की यात्रा में वे हमारे साथ रहे हैं और हमारी भरपूर सेवा की है। क्योंकि हमारी उम्र बढ़ती जा रही है, इसलिए हमारे आस-पास एक नवयुवक होना ही चाहिए था जो हमारा ध्यान रख सके। उनके हिंदी में बोलने ने भी उन्हें हमारे बहुत निकट ला दिया था। उन्होंने हमें हंगरी की कतिपय विशेष ध्वनियों के उच्चारण को भी सिखाया था जैसे कि z को ज़ की तरह, sz को स की तरह, zs को झ की तरह, gy को द्य की तरह, cs को च की तरह, j को य की तरह उच्चारण किया जाता है इत्यादि। उम्लाउत u", o" के विषय में मुझे पहले से ही जानकारी है क्योंकि जर्मनी में मैंने कुछ समय बिताया है। वहाँ की भाषा का यह अभिन्न अंग है। स् का श् की तरह उच्चारण मेरे लिए एक बहुत बड़ी समस्या खड़ी कर देता है। स् के अंग्रेज़ी में स् की तरह ही उच्चारण का मैं आदी हो चुका हूँ। हंगेरियन में भी मैं उसका उसी तरह उच्चारण कर देता हूँ। अगले ही क्षण मुझे अपनी ग़लती का एहसास हो जाता है। मुझे डर है कि यदि मैं हंगेरियन उच्चारण अपना लूँगा तो मेरा अंग्रेज़ी का उच्चारण बिगड़ जाएगा। हंगेरियन भाषा में मेरी

रुचि को देख श्री गैर्गैय कहते हैं कि मैं इसे बहुत जल्दी सीख सकता हूँ। यही विचार सुश्री रोज़ॉलिया का भी है जो कहती हैं कि आप डा. गेज़ा बैत्लैनफॉल्वी की पूर्व पत्नी श्रीमती मार्गित कवैश से सम्पर्क कीजियेगा जो नई दिल्ली स्थित हंगेरियन सूचना-केन्द्र में हंगेरियन भाषा की प्राध्यापिका हैं। इससे पूर्व वे दिल्ली विश्वविद्यालय में हंगेरियन की प्राध्यापिका थीं। उनका विचार है कि वह मुझे हंगेरियन भाषा के जो मूलभूत तत्त्व हैं उन्हें समझा देंगी और प्रारम्भिक स्तर पर भाषा सीखने वालों के लिए उपयुक्त किसी पुस्तक या किन्हीं पुस्तकों के बारे में मुझे बता देंगी। मैं उन्हें कहता हूँ कि मैं हंगेरियन भाषा सीखना चाहता हूँ। हो सकता है कि जब अगले वर्ष महीना-भर चलने वाले भारत-हंगेरियन सांस्कृतिक उत्सव, जिसकी योजना हमने बनाई है, के अवसर पर मैं हंगरी आऊँ तो हंगेरियन भाषा का साधारण ज्ञान मैंने हासिल कर लिया हो।

(4)

2000

1.6.2000

कल दोपहर से सुश्री रोज़ॉलिया मेरे साक्षात्कार हेतु हंगरी के दूरदर्शन से सम्पर्क कर रही थीं। आज प्रातः 10 बजे उन्हें हंगेरियन हाउस में इसे निर्धारित करने में सफलता मिली। उनके खोये हुए बैग के बारे में तब तक की स्थिति का पता लगाने एवं उसके मुआवज़े के रूप में जो राशि उन्हें दी जानी थी उसे लेने के लिए ब्रिटिश एयरवेज़ में जाने के कारण श्री नोरा मैस्लर हम लोगों को अतिथि-गृह से लेते हैं और हमें हंगेरियन हाउस में पहुँचा देते हैं और उसके निर्देशक श्री रौयनॉय मिक्लोश से हमारा परिचय कराते हैं। सवा दस बजे के लगभग बुदापैश्त के दूना दूरदर्शन के कार्यक्रम अधिकारी श्री आदम ए. लाज़ार एक महिला सहायिका के साथ मेरा साक्षात्कार लेने के लिए हंगेरियन हाउस पहुँचते हैं। क्योंकि वे थाईलैण्ड पर एक डाक्यूमेंट्री फिल्म तैयार कर रहे हैं इसलिए उनके बहुत से प्रश्न उसी देश से सम्बद्ध होते हैं। रोज़ॉलिया ने इससे पहले उन्हें बता दिया था कि मैंने राजकुमारी महाचक्री सिरिन्थौर्न को पढ़ाया है। कुछेक प्रश्न वे रामायण एवं आने वाले रामायण सम्मेलन तथा सूर्यवंश एवं हंगेरियन परंपराओं के बारे में भी करते हैं। थाईलैण्ड के बारे में कुछ प्रश्न चुभते हुए थे और एक प्रकार की जानकारी मुझसे लेने की दृष्टि से किए गए थे।

प्र.- अपने अनुभव के आधार पर आप क्या समझते हैं कि क्या विशेष गुण राजपरिवार के शिक्षक में होने चाहिए?

उ.- उसे अपने विषय की हाल तक की जानकारी होनी चाहिए, उसका गहरा ज्ञान उसमें होना चाहिए और व्याख्या-पद्धति उसकी सुस्पष्ट होनी चाहिए।

प्र.- महाराज के बारे में कहा जाता है कि वे एक वैज्ञानिक हैं, फोटोग्राफर हैं, लेखक हैं इत्यादि। क्या इतनी अलग-अलग प्रकार की योग्यता एक ही व्यक्ति में सम्भव है?

उ.- सम्भव है। पूर्वी देशों में एक विशेष शास्त्र का विशेषज्ञ होना और अन्य शास्त्रों का गहरा ज्ञान होना आम बात है। महाराज वैज्ञानिक हैं पर अन्य अनेक विषयों का भी उन्हें भरपूर ज्ञान है।

प्र. - महाराज का आप किस प्रकार मूल्यांकन करेंगे?

उ. - वे महान् हैं। कुछ वर्ष पूर्व यह उनकी उदारता थी कि उन्होंने इस संज्ञा को स्वीकार किया। वे उन थाई नरेशों की जिन्हें महान् कहा जाता है, पंक्ति में आते हैं। जैसे महाराज रामकमहैङ्, महाराज नराय, महाराज तक्सिन्। एक बात जो उन्हें अन्य थाई नरेशों से पृथक् करती है वह यह है कि वे थाई इतिहास में सबसे अधिक समय तक शासन करने वाले महाराज हैं।

प्र. - सामान्य जनता की दृष्टि में राजवंश का क्या स्थान है?

उ. - जनता महाराज को अपने पिता की तरह मानती है। थाई लोग महाराजकुमारी को स्नेह से 'हमारी महाराजकुमारी' के रूप में सम्बोधित करते हैं। थाई राजपरिवार के लिए लोगों के मन में अथाह प्यार है।

प्र. - हंगरी के लिए रामायण की क्या प्रासंगिकता है? सम्मेलन यहाँ क्यों आयोजित किया गया?

उ. - रामायण हंगरी के लिए अपरिचित नहीं है। पहले से ही दो हंगेरियन विद्वानों प्रो. यानोशी और प्रो. योझैफ़ वैकैर्दी ने इसका हंगेरियन में अनुवाद कर रखा है। इनमें से प्रो. वैकै़र्दी ने तो अपने अनुवाद की प्रति मुझे भेंट भी की थी गत बार जब मैं बुदापैश्त में था। मुझे बताया गया था कि दोनों ही अनुवाद उत्तम कोटि के हैं। जहाँ तक हंगरी के लिए रामायण की प्रासंगिकता का प्रश्न है, मेरा यह कहना है कि इसकी

प्रासंगिकता सभी देशों और कालों के लिए है। रामायण दो शब्दों को मिला कर बना शब्द है। राम और अयन। अयन का अर्थ है मार्ग। इस प्रकार रामायण का अर्थ हुआ राम का मार्ग। संस्कृत में एक सुप्रसिद्ध उक्ति है—'रामादिवद् वर्तितव्यं न रावणादिवत्।' व्यक्ति को राम जैसों की तरह आचरण रखना चाहिए न कि रावण जैसों की तरह।

प्र. - सम्मेलन का आयोजन अनेक विषयों को लेकर किया जा रहा है। जैसे रामायण, हूण जाति, हंगरी की परम्परा इत्यादि। इन सब में परस्पर क्या सम्बन्ध है?

उ. - सम्बन्ध सूर्य पर आधारित है। हूण लोग सूर्य पूजक थे। राम सूर्यवंशी थे। हंगरी के लोगों में सूर्य देवता के लिए विशेष स्थान है। रामायण में एक बहुत रुचिकर उपाख्यान है। उस उपाख्यान के अन्तर्गत आदित्य-हृदय नाम से एक स्तोत्र पाया जाता है जिसमें सूर्य देवता की स्तुति की गई है। जब राम और रावण के बीच घमासान युद्ध चल रहा था उस समय अगस्त्य ऋषि प्रकट हुए और उन्होंने उनसे कहा कि वह स्तोत्र वे उनसे सीख लें और उसका पाठ करें। उससे उन्हें शत्रुओं पर विजय प्राप्त होगी। राम ने वही किया जैसा उन्हें कहा गया था और वे रावण को मारने में सफल हुए।

प्र. - यह कैसे सम्भव हुआ कि आपको महाराजकुमारी का शिक्षक होने का अवसर प्राप्त हुआ?

उ. - महाराजकुमारी ने स्नातक स्तर तक संस्कृत पढ़ी थी। उनकी इच्छा थी उच्च स्तर तक इसे पढ़ने की। थाई सरकार ने भारत सरकार से एक संस्कृत अध्यापक भेजने का अनुरोध किया। इस कार्य के लिए मेरा चयन किया गया।

प्र. - पढ़ाई में महाराजकुमारी आपको कैसे लगीं ?

उ. - अति उत्तम। अत्यन्त बुद्धिमती। उनकी स्मरण शक्ति बहुत विलक्षण है। उसके प्रमाण स्वरूप अनेक घटनाओं में से कुछ को मैं उद्धृत करना चाहता हूँ। विश्वविद्यालय की परीक्षा चल रही थी। एक दिन महाराजकुमारी प्रातः सात बजे के लगभग विभाग में आईं। कुछ बिन्दुओं

का स्पष्टीकरण उन्हें अपेक्षित था। वे अपनी शंकाएँ रखती गईं और मैं समाधान करता गया। यह शंका-समाधान तीन घण्टे चलता रहा। 9 बजे से 12 बजे मध्याह्न तक। तब उनकी अंगरक्षिका ने बीच में हस्तक्षेप किया और महाराजकुमारी को याद दिलाया कि अब समय है कि वे मध्याह्न भोजन ग्रहण करें और 1 बजे से प्रारम्भ होने वाली परीक्षा के लिए तैयार हो जाएँ। परीक्षा समाप्त होने पर मैंने उनकी उत्तर पुस्तिका जांची। मुझे यह देख कर विस्मय हुआ कि मैंने जो बोला था उसका 75 प्रतिशत अक्षरशः उन्होंने उस रूप में लिख दिया था। यह है उनकी स्मृति-शक्ति!

प्र. - आपको थाइलैण्ड से कोई सम्मान मिला?

उ. - तत्काल नहीं पर बाद में। सिल्पाकौर्न विश्वविद्यालय ने मुझे मानद डाक्टरेट की उपाधि दी। महाराज ने मुझे दिरेक गुणाफोर्न नाम का राजकीय अलंकरण प्रदान किया।

प्र. - थाई राजपरिवार के सदस्यों में और आम जनता में किस प्रकार का अन्तर है?

उ. - दोनों एक जैसे हैं। अन्य छात्रों की तरह महाराजकुमारी विश्वविद्यालय में आती थीं। जो पाठ्यक्रम अन्य लोगों के लिए थे, वही उनके लिए भी। यह अलग बात है कि जितनी देर भी पाठ चलता रहता था उतनी देर के लिए विश्वविद्यालय के सीनेट कक्ष को अध्ययन कक्ष के रूप में परिवर्तित कर दिया जाता था जिसके चारों ओर सुरक्षा की व्यवस्था रहती थी।

साक्षात्कार बहुत संतोषजनक रहा। साक्षात्कारकर्ता ने अपने विचार इन शब्दों में व्यक्त किए कि उनकी इच्छा तो है तीन घण्टे तक मुझे सुनते रहने की पर समय की अपनी सीमा है।

दोपहर में राजदूत का ड्राइवर हमें लेने के लिए आया। हम राजदूत के साथ ऐस्तैरगोम गए जहाँ प्राचीन हंगेरियन परम्परा पर आधारित रोज़ॉलिया के चित्रों का राजदूत को उद्घाटन करना था।

ऐस्तैरगोम में अपने उद्घाटन भाषण में राजदूत ने मेरा उल्लेख किया और कहा कि ये संस्कृत के एक महान् विद्वान् हैं। वस्तुस्थिति यह

है कि ये संस्कृति के सबसे बड़े विद्वान् हैं। उद्घाटन समारोह के पश्चात् जब मैं चित्रों को जिनका विवरण उनकी बायीं ओर अंग्रेज़ी में दिया था देख रहा था, नोरा मैस्लर ने मेरा एक सज्जन से परिचय कराया जिसने मुझे बताया कि उसके पास संस्कृत पर एक पुस्तक है जो उसने जब वह न्यूयार्क गया था तो वहाँ से खरीदी थी और जिसमें इसका इतिहास और इसकी शब्द संरचना की व्याख्या है। व्यवसाय में वह एक डॉक्टर है और वर्तमान में काउंटी काउंसिल का सदस्य है। विचित्र और अनजानी भाषाओं में उसकी रुचि होने के कारण वह न्यूयार्क में एक किताबों की दुकान में गया और एक अजीब-सी भाषा में एक पुस्तक उसे दिखाई दी तो उसे खरीद लाया। इतना भर उसका उस पुस्तक के साथ परिचय है। उसका नाम, जैसा कि मैं उसके विज़िटिंग कार्ड से जान पाया, है वर्ग घोज़ो। उसकी याद मुझे बनी रहे इसलिए अपने कार्ड पर उसने लिखा "हंगरी का एक संस्कृत का अनन्य अनुरागी"। यह संसार अजीब है। अजीब लोग इसमें रहते हैं। कैसे वह एक संस्कृत पुस्तक की ओर उन्मुख हो गया और कैसे उसकी संस्कृत में रुचि जग गई। यह सब एक कल्पना-सी लगती है। पर कहावत है कि सच्चाई कल्पना से अधिक विचित्र होती है। घोज़ो ने कहा कि वह संस्कृत नहीं जानता है। यह कठिन भाषा है। यह उसका मत था पर संस्कृत की पुस्तक उसके पास है इसका उसे गर्व है। जब उसे पता चला कि भारत से आने वालों में एक संस्कृत का विद्वान् भी है, वह अपने आप को रोक न सका। आगे आया और कहने लगा कि उसका संस्कृत के साथ सम्पर्क है और उसके पास संस्कृत की एक पुस्तक है।

बुदापैश्त के एक भारतीय रेस्तरां 'शालीमार' में हमने रात्रिभोज किया और अतिथि-गृह में आकर रात्रि विश्राम किया। राजदूत की कार में हम ऐस्तैरगोम से बुदापैश्त वापिस आए। रास्ते में उनकी दृष्टि फलों की एक दुकान पर पड़ी जिसमें तरबूज़ थे। उन्होंने ड्राइवर से कहा कि वह उनके लिए एक तरबूज़ खरीद ले। स्ट्रॉबेरी को चेरी समझते हुए उन्होंने ड्राइवर से कहा कि आधा-आधा किलो दो जगह के लिए वह उन्हें बँधवा

ले, एक आधा किलो उनके लिए और एक आधा किलो हमारे लिए। जब उन्हें बताया गया कि चेरी नहीं स्ट्रॉबेरी है तो उन्होंने कहा कि दो टोकरियाँ ले आओ। एक उनके लिए और एक हमारे लिए। उनके इस आत्मीय भाव ने हमें गहरे तक स्पर्श कर लिया।

कल रामायण सम्मेलन का उद्‌घाटन है। रोज़ॉलिया ने हमें बताया कि अब उसका समय इल्दिको पुश्काश की सुविधा के लिए प्रातः 10 बजे के बजाय अपराह्ण 1 बजे है।

2-06-2000

मैं सुबह जग जाता हूँ और पूर्व दिन की घटनाओं को लेखबद्ध करता हूँ। पहले की सभी हंगरी यात्राओं में मैंने अपनी डायरी लिखी। मुझे इस बात का संतोष है कि इस बार भी इसमें अपवाद नहीं हो रहा है। मध्याह्न भोजन 12 बजे के लगभग हम 'शालीमार' रेस्तरां में करेंगे और वहीं से सम्मेलन के उद्‌घाटन के लिए प्रस्थान करेंगे। सम्मेलन का उद्‌घाटन 2 बजे मेरे मंगलाचरण से होता है जिसे मैं दो भागों में विभक्त करता हूँ—वैदिक मंगलाचरण और लौकिक मंगलाचरण। वैदिक मंत्रपाठ और लौकिक संस्कृत स्तोत्रपाठ। लौकिक स्तोत्रपाठ में श्रीराम, हनुमान्, भवानी-शंकर, वाणी और विनायक और अन्त में वाल्मीकि की स्तुति है। अभी मंगलाचरण चल ही रहा है कि भारत की राजदूत लक्ष्मी पुरी दीप प्रज्वलन करती हैं और मंचस्थ राम, सीता, हनुमान् और गणेश की प्रतिमाओं पर माल्यार्पण करती हैं। मंगलाचरण की समाप्ति पर वे सम्मेलन का उद्‌घाटन करती हैं। हंगरी की सरकार के संस्कृति मंत्रालय की एक प्रतिनिधि सुश्री कैथेरिन शोश तब अपना वक्तव्य प्रस्तुत करती हैं और इसके बाद प्रस्तुत होता है मेरा सुदीर्घ भाषण, जिसमें मैं आदित्य-हृदय स्तोत्र का उल्लेख करता हूँ। इसके साथ उस प्रकरण का भी जिसमें वह रामायण में पाया जाता है और जिस लक्ष्य को वह वहाँ सम्पन्न करता है। यह इन विषयों पर रामायण सम्मेलन के आयोजन के औचित्य को सिद्ध

करता है जो देखने में एक दूसरे से सर्वथा असम्बद्ध लगते हैं जैसे कि रामायण, सूर्यवंश और प्राचीन हंगेरियन परंपरा। इन सभी में सूर्य की पूजा का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। राम का सूर्यवंशी होना रामायण को इन सबसे जोड़ता है। मेरे भाषण के बाद डॉ. इल्दिको पुश्काश संक्षेप में अपने विचार व्यक्त करती हैं। उसके पश्चात् डॉ. लक्ष्मण सिंह बिष्ट हिंदी में कतिपय शब्दों में अपनी बात कहते हैं। उद्घाटन सत्र के बाद आधे घंटे का विराम होता है। इसके पश्चात् डॉ. पुश्काश अपना भाषण प्रस्तुत करती हैं। बौद्धिक कार्यक्रम के अन्त में श्रीमती सुष्मिता बैनर्जी रामायण के कतिपय आख्यानों पर आधारित कत्थक नृत्य प्रस्तुत करती हैं।

दिन के अन्त में श्रीमती लक्ष्मी पुरी अपने घर में सहभोज का आयोजन करती हैं जहाँ मुझे हंगरी के प्रधानमंत्री के कार्यालय में वैज्ञानिक परामर्शदाता के रूप में कार्यरत श्री हॉमॉरी के साथ सुदीर्घ वार्ता का अवसर प्राप्त होता है। जब भोजन चल रहा होता है तो मैं सुश्री रोज़ॉलिया को सुझाव देता हूँ कि अगले वर्ष विशेष विषयों पर जैसे कि हिंदू संस्कारों पर पाठ्यक्रम आयोजित करने पर भी वे विचार करें जिनमें लोग शुल्क देकर भर्ती हो सकें। इससे वे आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर हो जाएँगी। रोज़ॉलिया को यह सुझाव काफ़ी पसन्द आता है। पाठ्यक्रम के समाप्त होने तक जिन्होंने इसमें भाग लिया था, उन्हें प्रमाण पत्र दिए जा सकते हैं।

3-06-2000

कार्यक्रम राम और सीता के विवाह के प्रसंग से जो कि विषय की अवतरणिका मात्र है मेरे हिंदू संस्कारों पर भाषण से प्रारम्भ होता है। भाषण 10 से 12.30 बजे तक चलता है। श्रीमती लक्ष्मी पुरी निरंतर उसमें उपस्थित रहती हैं। मैं देखता हूँ कि वह भरपूर नोट्स ले रही होती हैं। लगभग 1 घण्टे बाद लगातार खड़े रहने से मुझे आयास का अनुभव होने लगता है। क्योंकि राजदूत वहाँ स्वयं उपस्थित हैं इसलिए मैं अपनी

भावनाओं को बाहर नहीं आने देता और बोलता ही जाता हूँ। भाषण की समाप्ति पर मेरी साँस फूलने लगती है और मैं अत्यन्त नाज़ुक स्वास्थ्य में होने पर भी, जबकि कुछ समय पूर्व ही मेरी एंजियोप्लास्टी हुई है, लगातार खड़े रहने के अपने अविवेक पर दुखी होता हूँ। मुझे खेद है कि मैंने अनावश्यक संकट में अपने को डाला। पर जो होना था वह हो गया। पासा फैंका जा चुका था। अब कुछ नहीं हो सकता था। मैं जैसे तैसे अपने को स्थिर करता हूँ और मध्याह्न भोजन के लिए 'शालीमार' रेस्तरां की ओर प्रस्थान करता हूँ।

अपराह्ण में कुछ भाषण सुनता हूँ जो सभी हंगेरियन में हैं। पहला प्रो. इल्दिको पुश्काश का है जिसकी अध्यक्षता मैं करता हूँ। अपने को पहले बहुत आयास में डालने के कारण मैं बहुत थकावट का अनुभव करता हूँ। मंच पर बैठे-बैठे ही मैं गिरने को हो रहा हूँ। क्योंकि जनता मुझे देख रही है इसलिए मैं अपने को सम्भालता हूँ। अन्य भाषणों के समय मैं मंच पर नहीं रहता हूँ। पीछे कुर्सियों पर श्रोताओं के मध्य बैठे हुए मैं मजे से सो जाता हूँ। दोपहर बाद रोज़ॉलिया मुझे सुष्मिता के कमरे में ले आती है, जहाँ मध्याह्न से मेरी पत्नी विश्राम कर रही थीं। मैं हाथ मुँह धोता हूँ और कुछ चेरी खाता हूँ जो सुष्मिता मुझे देती है। और उसके साथ उसकी नृत्य प्रस्तुति के लिए चल देता हूँ। इस प्रस्तुति के पश्चात् 'शालीमार' रेस्तरां के मालिक डॉ. अमर कुमार सिंह अपने यहाँ हमें ले जाते हैं। उसके पश्चात् वे अपनी कार में बुदापैश्त के रात्रिदर्शन के लिए हमें ले जाते हैं जो बहुत आनंददायक होता है, विशेषकर नदी पर एक पुल जिस पर बहुत सी रोशनी की गई है। वहाँ से एक पहाड़ी का दृश्य और उसके तट पर बने भवन। वे हमें बुदापैश्त के एक उल्लेखनीय स्थल 'हीरोज़ स्क्वेयर' में भी ले जाते हैं और इधर-उधर की अनेक चीजें दिखा कर हमें अतिथिगृह की ओर ले जाते हैं। उस समय 11.30 का समय हो रहा होता है। प्रातः से लेकर मध्यरात्रि तक लगातार व्यस्त रहने के कारण हम बहुत थकावट का अनुभव करते हैं और झटपट बिस्तर पर लुढ़क जाते हैं।

04-06-2000

सम्पूर्ण रामायण नाम की एक फिल्म हम देखते हैं। इसके कुछेक दृश्य बहुत हृदयस्पर्शी हैं। गोस्वामी तुलसीदास द्वारा वर्णित इस गाथा को संक्षिप्त कर फिल्म के रूप में इसे प्रस्तुत करना एक स्तुत्य प्रयास है।

दोपहर में मैं कतिपय भाषणों में उपस्थित रहता हूँ। वक्ताओं में से एक, श्री इल्दिको फ़ौबियान, एक आश्चर्यजनक तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित करते हैं और वह यह कि लगभग एक हजार वर्ष तक हंगरी के राजाओं की 'राम के राजा' यह उपाधि थी। राम किसी व्यक्ति विशेष का नाम नहीं है अपितु एक भौगोलिक संज्ञा है। पहले समय में यह एक क्षेत्र विशेष का नाम था जिसे आज बोस्निया कहा जाता है। वहाँ राम नाम की एक नदी है जोकि नॉरेत्वा (नदी) की सहायक नदी है। नॉरेत्वा को पहले नारेन्तोन के नाम से जाना जाता था जोकि बहते-बहते एड्रियाटिक समुद्र से जा मिलती है जिसने कि इस नदी को राम की संज्ञा प्रदान की है। हंगेरियन शासक 'राम के नरेश' यह उपाधि धारण करते रहे हैं। प्रथम हंगेरियन शासक सैन्त इश्तवान से लेकर अन्तिम हंगेरियन सम्राट् फ्रांज़ योज़ेफ़ एल्शो तक जिसकी मुत्यु 1896 ई. में हुई थी। श्री फोबियान यह बताते हैं कि पत्नी पति का आधा भाग है। संस्कृत की सुप्रसिद्ध उक्ति है—अर्द्धं भार्या मनुष्यस्य, यह विचार हंगरी में भी प्रचलित है।

पत्नी के लिए हंगेरियन में एक शब्द है फैलै शेग जिसमें फैलै का अर्थ है 'उसका आधा'। शेग एक संज्ञा प्रत्यय है जिसका अर्थ है 'के समान' जिसे अंग्रेज़ी में 'नेस' से प्रकट किया जाता है। हंगेरियन में एक शब्द है सीता। जिसका अर्थ है कुंवारी कन्या(महिला)। इसका एक अन्य अर्थ भी है—जागीर। इसका सम्बन्ध कदाचित् संस्कृत की सीता से भी हो सकता है जिसका अर्थ है हल के चलाने से बनी हुई लकीर। इस रूप में हंगेरियन में इसका सम्बन्ध भूमि या ज़मीन से भी है। यह रुचिकर बात है और इसमें और अधिक खोजबीन की आवश्यकता है। गत दिन प्राचीन हंगेरियन लिपियों तथा इसकी स्कीदियनों और मंगोलों की लिपियों पर, जो कि प्रायः चित्रात्मक थीं, पर एक विद्वान् ने भाषण दिया था। प्राचीन

हंगेरियन में सूर्य का बोध इस चिन्ह (⊙) से कराया जाता था। जबकि चीनी लिपि में गोलाकार के स्थान पर एक वर्गाकार (⊟) चिह्न होता है जिसके बीच में एक रेखा रहती है। हंगेरियन में इसके आगे एक और परिवर्तन आया और यह था कि गोलाकार में बिन्दु के स्थान पर वृत्त (◯) के आकार का एक लुढ़कता हुआ हुक लग गया।

भाषण के बाद प्रश्नोत्तर का कार्यक्रम है। चूँकि समय कम था इसलिए केवल दो ही प्रश्न पूछे जा सके। प्रश्नों का उत्तर देने के लिए मंच पर थे हंगरी में भारतीय दूतावास के परामर्शदाता, मैं, डॉ. लक्ष्मण सिंह बिष्ट और श्रीराम शर्मा। एक प्रश्न कि क्या यह सही था कि राम अयोध्या पर शासन करते रहें जबकि सीता को जंगल में निष्कासित कर दिया जाय। मैंने प्रश्न का उत्तर न देना ही ठीक समझा। इसका उत्तर घिसी-पिटी पद्धति पर ऑइओला और शर्मा ने दिया।

दिन भर के कार्य की समाप्ति सुष्मिता और तिलोत्तमा (लक्ष्मी पुरी की पुत्री) की नाट्य प्रस्तुति से होती है। उसके पश्चात् रोज़ॉलिया प्रतिभागियों को स्मृतिचिह्न अर्पित करती हैं। और इसी के साथ ही अद्वितीय रामायण समारोह की समाप्ति होती है जो कि केवल हंगरी में ही नहीं अपितु समस्त योरुप में अपने ढंग का पहला है।

05-06-2000

मैं भ्रमण के लिए और खाने-पीने की कुछ चीज़ों को खरीदने के लिए जाता हूँ। मैं देखता हूँ कि एक विद्वान् मेरी धर्मपत्नी के साथ वार्तालाप कर रहे हैं, वे हैं बुदापैश्त के 'गेट ऑफ़ धर्म कॉलेज फ़ार बुद्धिज़्म' के हिंदू अध्ययन विभाग के अध्यक्ष डॉ. फोरिझ लासलो। वे मुझे सम्मेलन के समय मिल चुके थे और उन्होंने इस व्यक्तिगत बातचीत के लिए इच्छा प्रकट की थी।

मैंने इसके लिए सोमवार प्रातःकाल का समय तय किया था जिसका मुझे पूरी तरह विस्मरण हो गया था। बातचीत प्रारम्भ होती है। उस समय

प्रातः काल 10.15 का समय रहा होगा। बातचीत अपराह्ण के 1.45 तक चलती रहती है। वे अपने छात्रों के शोध का परिचय देते हैं। मुझे दिखाने के लिए वे अपने एक सहयोगी के शोध प्रबन्धों की प्रतियाँ लेते आए हैं। बातचीत का प्रारम्भ डॉ. लासलो के एक भोले-भाले प्रश्न से होती है कि वैदिक मन्त्रों का प्रामाणिक पाठ किस प्रकार से किया जाता है? यह उन्हें समझ में नहीं आता कि उस तक किस तरह पहुँचा जाय। यदि कोई किसी पण्डित के पास जाए और उनके मुख से वेद पाठ सुने तो उसे टेपरिकार्ड ले जाना होगा और उसे रिकार्ड करना होगा पर क्या उसे इसकी अनुमति होगी? मैं उन्हें बताता हूँ कि तिरुपति देवस्थानम् ने पहले से ही कैसेट तैयार कर रखे हैं जिन्हें आशा है कि वहाँ से प्राप्त किया जा सकता है। मैं उन्हें देवस्थानम् का पता देता हूँ। डॉ. लासलो मुझे बताते हैं कि जब वे मात्र 16 वर्ष के थे तो उन्होंने बेनेडिक्टिव पैन्नौन हैल्मै मठ (मोनेस्ट्री) में प्रवेश ले लिया था जो ऑस्ट्रियन-हंगेरियन सीमा के निकटवर्ती स्थान 'घोर' के समीप है। 1974-1980 तक वे मठ में रहे जहाँ उन्होंने पुस्तकालयाध्यक्ष के रूप में भी काम किया। मठ में पुस्तकों का बहुत बड़ा संग्रह है जिसकी संख्या 3 लाख 20 हजार है। वहीं पर उन्होंने संस्कृत सीखना प्रारम्भ किया। पहले वह अपने ही प्रयास पर आधारित था। पुस्तकालय में संस्कृत पर कुछ पुस्तकें हैं जिनमें नई की अपेक्षा पुरानी अधिक हैं। इस पुस्तक संग्रह में मैक्डोनेल, बेन्फी, व्हिटनी इत्यादि की पुस्तकें हैं। स्वाध्याय के बाद उन्होंने व्यक्तिगत रूप से सप्ताह में एक बार प्रोफेसर तैरयेक से संस्कृत सीखना प्रारम्भ किया जो कि बुदापैश्त में तिब्बती भाषा के अध्यापक थे। इसके लिए वे हंगरी के पैन्नौन हैल्मै से बुदापैश्त जाते थे। मठ से दैब्रैत्सैन और दैब्रैत्सैन से बुदापैश्त में वे आ गए और भौतिकी और दर्शन का उन्होंने अध्ययन किया। इसके पश्चात् उन्होंने पैन्नोर विश्वविद्यालय के संयुक्त अध्ययन विभाग में प्रवेश लिया। उन्होंने भौतिकी और दर्शन में पी-एच. डी. की।

डॉ. लासलो का जन्म बुदापैश्त में हुआ था। इस समय ये 40 वर्ष के हैं। इनकी एक छात्रा शैन्का मारिया ऑन्ना ने ऋग्वेद के चतुर्थ मण्डल

के पांचवें सूक्त पर काम किया है। उसने इसका हंगेरियन में अनुवाद किया है और व्याकरण विषयक टिप्पणियाँ भी इस पर लिखी हैं। उनकी एक अन्य छात्रा गॉज़्दा एदित ने ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के 62-63वें सूक्तों में अश्वमेध परक मन्त्रों पर काम किया है। उसने हंगेरियन में इनका अनुवाद और व्याख्या की है। उसने भारतीय अश्वमेध और हंगेरियन तथा सीरियन अश्वपूजा-पद्धति का तुलनात्मक अध्ययन भी किया है और इसके लिए मध्य एशिया और स्टेप्पस् पर्वतों के रीति-रिवाजों को मठ के लिए पुरातात्विक प्रमाण के रूप में पेश किया है।

उनके एक सहयोगी तिबोर किर्तवैल्यैशी ने संस्कृत व्याकरण लिखा है और भगवदज्जुकीयम् नाटक का हंगेरियन में अनुवाद किया है। एक अन्य छात्र गाल बॉलाझ डिप्लोमा के लिए ऋग्वेद के वरुण सूक्तों पर शोध-प्रबन्ध तैयार कर रहे हैं। उनके और डाक्टर तिबोर के एक छात्र फ़ार्या ऐर्नो ने 1996 में सर्वदर्शन-सिद्धान्तसंग्रह पर एक पुस्तक लिखी है जिसमें उनकी अपनी टीका के साथ हंगेरियन में उसका अनुवाद किया गया है। डॉ. लासलो के एक सहयोगी डॉ. फैहेर यूदित, जो कि तिब्बती और संस्कृत भाषाओं के विद्वान् हैं, ने रत्नावली और मूलमध्यमकारिका का हंगेरियन में अनुवाद किया है। उनकी कृति तीन भाषाओं में है—संस्कृत, तिब्बती और हंगेरियन। तिबोर की एक अन्य छात्रा तोथ इबोया ने ऐतरेय ब्राह्मण के शुनःशेप उपाख्यान पर कार्य किया है। उन्होंने इसका हंगेरियन में अनुवाद भी किया है और इसकी व्याख्या भी। डॉ. फोरिझ लासलो ने ऋग्वेद में सृष्टि सूक्तों पर एक पुस्तक लिखी है जो कि 1995 में प्रकाशित हुई थी। अपने सात अध्यायों की इस पुस्तक में वैदिक वाङ्मय का सामान्य परिचय (अध्याय 1), ऋग्वेद संहिता का सामान्य परिचय (अध्याय 2), वैदिक यज्ञ (अध्याय 3), वैदिक कर्मकाण्ड(अध्याय 4), कर्मकाण्ड का प्रकरण (अध्याय 5), ब्रह्मन् (अध्याय 6) और ऋषि दीर्घतमस् और सात सूक्तों (अध्याय 7) के बारे में चर्चा है। उन्होंने धम्मपद का भी अंग्रेज़ी में अनुवाद किया है। उनके गद्य में दो भाषाओं का प्रयोग है। एक तो मूल

पालि और दूसरी अंग्रेज़ी जिसमें कि उसका अनुवाद किया गया है। इसमें परिशिष्ट के रूप में योगसूत्र का पाठ भी दे दिया गया है।

डॉ. लासलो कभी भारत नहीं आए। वे यहाँ संस्कृत के सम्बन्ध में प्रत्यक्ष रूप से जानने-समझने के लिए आने को बहुत उत्सुक हैं। जब वे मेरे पास आए तो उनके हाथ में पाणिनि पर बहुत-सी पुस्तकें थीं जिनमें मेरे पूज्य पितृश्री की 'पाणिनि रिइण्टरप्रेटिड' भी थी जिसे उन्होंने हाल ही में मोतीलाल बनारसीदास नाम की प्रकाशन संस्था से मंगवाया था।

आजकल संस्कृत पुस्तकों को मंगवाना आसान है, वे कहते हैं। पहले यह स्थिति नहीं थी। एक बार उनकी बुदापैश्त यात्रा में एक अद्‌भुतालय की दीर्घिका में खिड़की पर प्रदर्शनार्थ लगी पुस्तकों उनकी दृष्टि मोनियर विलियम्स के संस्कृत-अंग्रेज़ी कोश पर पड़ी। तत्काल उसे 1500 फोरिन्त में उन्होंने खरीद लिया। मैं 10 जून, 2000 को फ्लाइट के दौरान शाकाहारी भोजन के लिए भारतीय दूतावास को टेलीफ़ोन करना चाहता था। इसमें मुझे परेशानी हुई क्योंकि टेलीफ़ोन करने के लिए सिक्के चाहिए होते हैं जो कि मेरे पास नहीं थे। डॉ. लासलो ने कहा कि सम्प्रति कार्ड की पद्धति के प्रचलन के कारण सिक्कों की आवश्यकता नहीं रही। किंच, इससे पैसे भी सुरक्षित रहते हैं। लोग टेलीफ़ोन के बक्सों को तोड़ कर वहाँ से सिक्के निकाल लेते हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में वे बताते हैं कि लोग तारों की चोरी जैसे काम भी करने लगते हैं। कुछ समय पूर्व ऊपर के तार की चोरी कर लिए जाने के कारण एक ट्रैम दुर्घटना भी हो गई थी। यह सर्वथा अविवेकपूर्ण कार्य है। लोग इस तरह के काम करते हैं। हानि कितनी होगी और लाभ कितना होगा, इसका उनके लिए कोई अर्थ नहीं। तार को बेचने से चोरी करने वाले को क्या मिला होगा? 500 फ़ोरिन्त! इतनी सी राशि के लिए इतनी बड़ी क्षति! यह सर्वथा विवेकहीनता है।

मैं पैन्नौन हैल्मै को देखने की इच्छा प्रकट करता हूँ। डॉ. लासलो मुझे बताते हैं कि कार से वहाँ जाने में साढ़े तीन घंटे का समय लगेगा और

उतना ही आने में। ट्रेन से जाने में तो और भी अधिक समय लगेगा। यदि सात बजे प्रातः यहाँ से प्रस्थान किया जाता है तो पहुँचने का समय लगभग अपराह्ण 1 बजे होगा। ट्रेन से जाने में यह दो दिन की यात्रा होगी। क्योंकि मेरे पास इस यात्रा के लिए इतना समय संभव नहीं है, इसलिए मैं इसे भविष्य के लिए ही छोड़ देता हूँ।

प्रो. लासलो अपने एक लेख का अनुमुद्रण मुझे देते हैं जो मुझे बहुत प्रभावित करता है। उनकी पाणिनि एवं कात्यायन और पतंजलि जैसे अन्य वैयाकरणों की कृतियों की आश्चर्यजनक पकड़ है। दुरूह व्याकरण के ग्रन्थों और उनके जटिल दर्शन के विषय में इस तरह की अंतर्दृष्टि और वह भी नियमित रूप से गुरुमुख से संस्कृत सीखे बिना अचम्भे में डाल देती है। मेरे मुख से इसके लिए भरपूर प्रशंसा निकलती है।

6-6-2000

मैं प्रातः भ्रमण के लिए निकलता हूँ और छोटी मोटी खरीददारी भी करता हूँ। मध्याह्न के 12 बजे के लगभग डॉ. लक्ष्मण सिंह बिष्ट के साथ अगले दिन महान् संगीतकार बीथोवन से सम्बन्धित एक स्थान को देखने का कार्यक्रम निर्धारित किया जाता है।

जब मेरी उनके साथ बातचीत चल ही रही होती है तब नोरा, जोकि अपराह्ण 1 बजे तक वहाँ पहुँच चुकी होती हैं, कहती हैं कि हमें अतिथिगृह छोड़ना होगा और श्री आर. एस. ऑइओला के घर पहुँचना होगा जहाँ हमारे आवास की व्यवस्था की गई है। मैं जल्दी-जल्दी सामान बाँधता हूँ और हम सब ऑइओला के घर चल देते हैं। अगले तीन दिन हमें वहीं गुज़ारने हैं। नोरा हमें वहाँ पहुँचाती हैं। सन्ध्या के समय हॉल आफ नेशन्स में भारत-हंगेरियन मैत्री संघ के तत्वावधान में मैं आधुनिक हिंदू समाज पर भाषण देता हूँ। भाषण बहुत पसन्द किया जाता है।

07-06-2000

आज के दिन कुछ विशेष नहीं घटता। मैं कुछ समय डायरी लिखने में बिताता हूँ। विगत दिनों में मुझे किसी ने एक लघु पुस्तिका दी थी। हंगरी की अति प्राचीन लोक कथाओं में से एक का अंग्रेज़ी अनुवाद उसमें था। कथा बहुत रोचक थी। एक साँस में ही मैं उसे पढ़ जाता हूँ और हाथ के हाथ ही उसका हिन्दी में अनुवाद कर डालता हूँ। 'सफेद घोड़ी का बेटा' शीर्षक वह कथा इस प्रकार है–

एक समय की बात है कि सात समुन्दर पार एक सफ़ेद घोड़ी रहती थी। एक दिन उसने एक बेटे को जन्म दिया। सात बरस तक वह उसे अपना दूध पिलाती रही। फिर उसे एक दिन बोली–

बेटे, सामने के ऊँचे पेड़ को तुम देख रहे हो?

हाँ, माँ

उसके ऊपर चढ़ जाओ और इसकी छाल उतार लाओ। लड़का पेड़ पर चढ़ गया और जैसा उसकी माँ ने कहा था वैसा ही करने की उसने कोशिश की पर वह कर नहीं पाया। इस पर सफ़ेद घोड़ी ने और सात बरस तक उसे अपना दूध पिलाया और फिर कहा–सामने के ऊँचे पेड़ पर चढ़ जाओ और उसकी छाल उतार लाओ। इस बार बेटे को सफलता मिली। तब घोड़ी ने कहा–बेटे, मुझे लगता है अब तुम ताकतवर हो गए हो। अब समय आ गया है कि तुम संसार में प्रवेश करो क्योंकि शीघ्र ही मेरी मृत्यु हो जाएगी।

सफ़ेद घोड़ी की मृत्यु हो गई और उसका बेटा दुनिया देखने चल दिया और दूर-दूर तक पहुँच गया। वह चलता गया और चलते-चलते उस स्थान पर पहुँच गया जहाँ एक आदमी मज़बूत से मज़बूत पेड़ों को ऐसे उखाड़ रहा था मानों वे घास-फूस हों।

सुप्रभातम्, सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने कहा।

सुप्रभातम्, कुत्ते। मैंने सफ़ेद घोड़ी के बेटे के बारे में सुन रखा है। मैं उससे दो-दो हाथ करना चाहूँगा।

उन दोनों में युद्ध हुआ। जैसे ही सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने पेड़ उखाड़ने वाले पर हाथ रखा, वह चित होकर गिरा।

पेड़ उखाड़ने वाला बोला—तुम मुझसे ज़्यादा ताकतवर हो। आओ हम मिलकर काम करें। आज से मैं तुम्हारी सेवा में रहूँगा। सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने कहा, अच्छा। उस क्षण से वे एक की बजाय दो हो गए। वे चलते गए। चलते-चलते उन्हें एक ऐसा आदमी दिखाई दिया जो इस तरह पत्थर तोड़ता था जैसे कि वे कोई पाव रोटी हो।

सुप्रभातम्, सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने उससे कहा।

सुप्रभातम्, तू कुत्ते। मैंने सफ़ेद घोड़ी के बेटे के बारे में सुन रखा है। मैं उससे दो-दो हाथ करना चाहूँगा।

तब इधर आ जाओ, मैं ही सफ़ेद घोड़ी का बेटा हूँ।

दोनों के बीच युद्ध हुआ। पर जैसे ही सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने पत्थर तोड़ने वाले को अपनी गिरफ्त में लिया वह धम्म से ज़मीन पर जा गिरा। मैं तुमसे लड़ नहीं सकता—पत्थर तोड़ने वाला बोला। अगर तुम मुझे स्वीकार करो तो जीवन पर्यन्त तुम्हारा वफ़ादार नौकर बन कर रहूँगा।

अब वे तीन थे।

वे चलते गए और चलते-चलते उन्हें एक ऐसा आदमी दीख गया जो लोहे को ऐसे गूँध रहा था मानों कि आटा गूँध रहा हो।

सुप्रभातम्, सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने उससे कहा।

सुप्रभातम्, तू कुत्ते।

मैंने सफ़ेद घोड़ी के बेटे के बारे में सुन रखा है। मैं उससे दो-दो हाथ होना चाहूँगा।

तब आओ इधर, मैं ही सफ़ेद घोड़ी का बेटा हूँ। बहुत देर तक उनकी लड़ाई चली। किसी का भी पलड़ा भारी उसमें न रहा। आखिर में एक क्षण के लिए जब सफ़ेद घोड़ी का बेटा लड़खड़ाया, वह औंधे मुँह गिरा। इस पर उसे बहुत गुस्सा आ गया। वह उछला और उसने लोहे को गूँधने वाले को इतनी ज़ोर से गिराया कि वह उठ न पाया। वह भी सफ़ेद घोड़ी के बेटे का नौकर बन गया।

अब वे चार हो गए। उन्हें चलते-चलते अंधेरा हो गया। तब उन्होंने एक बसेरा बना कर रात बितायी। दूसरे दिन सफ़ेद घोड़ी का बेटा पेड़ उखाड़ने वाले से बोला—तुम यहीं रहना और खिचड़ी बना कर रखना। इस बीच हम शिकार करके आते हैं।

वे चले गए।

जैसे ही पेड़ उखाड़ने वाला आग जला कर खिचड़ी पकाने लगा एक वेताल उसके सामने प्रकट हुआ। वह छोटे कद का था। उसकी दाढ़ी जमीन को छू रही थी। पेड़ उखाड़ने वाला उसे देख बुरी तरह डर गया। यह डर और भी बढ़ गया जब वेताल बोला—मैं सात सिरों वाला वेताल हूँ। वह खिचड़ी मुझे दे दो नहीं तो मैं उसे तुम्हारी पीठ पर से लेकर खाऊँगा। पेड़ उखाड़ने वाले ने खिचड़ी उसे तत्काल दे दी। वेताल सारी की सारी खिचड़ी चट कर गया और खाली बर्तन उसे थमा गया।

जब बाकी लोग लौट कर आए और उन्होंने देखा कि उनके खाने के लिए कुछ भी नहीं है तो उन्हें बहुत क्रोध आया। उन्होंने पेड़ उखाड़ने वाले की खूब मरम्मत की। पेड़ उखाड़ने वाले ने यह नहीं बताया कि खिचड़ी का क्या हुआ।

अगले दिन पत्थर चूर करने वाला घर में रहा। जैसे ही वह खिचड़ी पकाने को हुआ, सात सिरों वाला वेताल उसके पास आया और उसने वही बात कही जो पिछले दिन कही थी। यदि तुम मुझे खिचड़ी नहीं दोगे तो मैं उसे तुम्हारी पीठ पर से खाऊँगा। पत्थर चूर करने वाले का मन उसे खिचड़ी देने का नहीं हुआ। वेताल ने उस पर वही किया जो उसने कहा था। उसने खिचड़ी का बर्तन उसकी पीठ पर रखा और सारी की सारी खिचड़ी चट कर गया।

बाकी के तीन जब घर की ओर आ रहे थे तो पेड़ उखाड़ने वाला मन ही मन हँस रहा था क्योंकि वह जानता था कि सात सिरों वाले वेताल ने खिचड़ी पत्थर चूर करने वाले से भी हथिया ली होगी। पत्थर चूर करने वाले की भी वही दशा हुई जो पहले दिन पेड़ उखाड़ने वाले की हुई थी। उसकी भी जम कर मरम्मत हुई, क्योंकि खाने की खिचड़ी जो नहीं थी।

तीसरे दिन लोहा गूँधने वाला घर पर रहा। उसे और सफ़ेद घोड़ी के बेटे को न तो पेड़ उखाड़ने वाले ने और न ही पत्थर चूर करने वाले ने बताया कि पिछले दो दिन खिचड़ी क्यों नहीं मिल सकी।

शीघ्र ही सात सिरों वाला बेताल लोहा गूँधने वाले के पास आया और खिचड़ी माँगने लगा। जब उसने उसे देने से इन्कार किया तो उसने उसे धक्का देकर गिरा दिया और उसके नंगे पेट पर खिचड़ी बिखेर उसे खाने लगा।

जब बाकी के तीन लौटे तो उन्होंने लोहा गूँधने वाले की अच्छी खासी मरम्मत की।

सफ़ेद घोड़ी के बेटे को यह समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कारण है कि तीनों में से किसी ने भी खिचड़ी नहीं पकाई। इसलिए चौथे दिन वह स्वयं घर में रह गया। बाकी तीन अपने मालिक को लेकर हँसते रहे क्योंकि उन्हें मालूम था कि सात सिरों वाला वेताल उसके पास भी आएगा और वही हुआ भी। पर इस बार सात सिरों वाले वेताल की नहीं चल पाई क्योंकि सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने उसकी लम्बी दाढ़ी से ही उसे पेड़ से बांध दिया। जब तीन साथी घर लौटे तो उन्होंने देखा कि खिचड़ी तैयार है। जैसे ही वे जी भर खिचड़ी खा चुके वैसे ही सफ़ेद घोड़ी का बेटा बोला—मेरे साथ आओ, मैं आप लोगों को कुछ दिखाता हूँ। वह उन्हें उस पेड़ के पास ले जाना चाहता था जिससे उसने सात सिरों वाले वेताल को बाँध रखा था। पर पेड़ वहाँ था नहीं। वेताल उसे अपने साथ ले गया था।

सभी के सभी तब वेताल की खोज़ में निकल पड़े। सात दिन और सात रात चलने के बाद उन्हें एक छेद दिखाई दिया जहाँ से सात सिरों वाला वेताल पाताल लोक में गया था। पहले तो वे सोचते रहे कि उन्हें क्या करना चाहिए। फिर उन्होंने निश्चय किया कि उन्हें पाताल पहुँचना ही चाहिए। पेड़ उखाड़ने वाले ने एक टोकरी बनाई और पेड़ की टहनियों की एक रस्सी बाटी जिससे कि वह छेद में से भीतर उतर सके। उसने अपने साथियों से कहा कि अगर वह रस्सी को थाम ले तो वे उसे ऊपर

खींच लें। अभी उसने एक चौथाई रास्ता ही पार किया होगा कि वह डर गया और उसने रस्सी को थाम लिया जिससे कि उसके साथी उसे ऊपर की ओर खींच लें। मैं जाता हूँ—पत्थर चूर करने वाले ने कहा। अभी उसने एक तिहाई रास्ता ही पार किया होगा कि वह भी डर गया और पहिले वाले की तरह उसे भी ऊपर खींच लिया गया। आप लोग कितने डरपोक हैं—लोहा गूँधने वाले नें कहा। आधे रास्ते में उसका साहस भी जवाब दे गया और उसे भी ऊपर खींच लिया गया। तब सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने कहा—अब मैं अपनी किस्मत आजमाता हूँ। उसके मन में डर नहीं था। वह पाताल पहुँच गया, टोकरी से निकला और इधर-उधर देखने लगा। उसे एक छोटा सा घर दिखाई दिया। वह घर में गया। उसने वहाँ क्या देखा कि वही सात सिरों वाला वेताल चिमनी के किनारे दाढ़ी पर हाथ फेरता हुआ बैठा है। उसके पास ही चूल्हे पर एक बर्तन में खिचड़ी पक रही है।

सो रे वेताल, यहाँ हो तुम। सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने कहा। तुम मेरी खिचड़ी मेरे पेट पर से खाना चाहते थे। अब मैं तुम्हारे पेट पर से खाऊँगा।

यह कह उसने उसे पकड़ा, ज़मीन पर पटका और खिचड़ी उसके पेट पर उंड़ेल चट कर गया। तब वह घर से बाहर आया, वेताल को उसने पेड़ से बाँध दिया और अपना रास्ता पकड़ा।

वह चलता गया और चलते-चलते एक महल के पास पहुँच गया जो कि ताँबे के खेत और जंगल से घिरा था। वह महल में गया। वहाँ उसे एक सुन्दर राजकुमारी दिखाई दी जो कि ऊपर के आदमी को देख बहुत डरी हुई थी।

ऊपर के लोक के तुम आदमी, यहाँ किसलिए आए हो? यहाँ तो पंछी तक भी नहीं उड़ता।

मैं वेताल का शिकार करने आया था—सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने कहा।

बद किस्मत! मेरा पति तीन सिरों वाला एक व्याल है, वह जब आएगा तो तुम्हें मार डालेगा। झटपट कहीं छुप जाओ।

"मैं छुपूँगा नहीं। उससे युद्ध करूँगा।"

उसी क्षण तीन सिरों वाला व्याल आ धमका। ओ कुत्ते, उसने सफ़ेद घोड़ी के बेटे से कहा, शीघ्र ही तुम मौत के मुँह में पहुँच चुके होंगे। पर पहले मेरे साथ मेरे ताँबे के खेत में आओ ताकि मैं तुमसे युद्ध कर सकूँ।

उनका युद्ध प्रारम्भ हुआ।

बहुत देर नहीं लगी कि सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने उसे ज़मीन पर पटका और एक-एक कर उसके तीन सिर काट दिए। तब वह राजकुमारी के पास गया और बोला—

मैंने तुम्हें आज़ाद कर दिया है, राजकुमारी। आओ मेरे साथ ऊपर की दुनिया में चलो।

मुझे खेद है। राजकुमारी ने कहा, मेरी दो बहनें भी यहाँ नीचे की दुनिया में हैं। उन्हें भी एक-एक व्याल पकड़ लाया था। उन्हें आज़ाद कर दो। मेरा पिता तुम्हें अपनी सबसे सुन्दर बेटी दे देगा और अपना आधा राज भी।

तो चलो, तुम्हारी बहनों को ढूँढ़ते हैं।

और वे उन्हें ढूँढ़ने चल दिए।

चलते-चलते उन्हें एक महल दिखाई दिया जो चाँदी के खेत और चाँदी के जंगल से घिरा था।

तुम यहाँ छिप जाओ, मैं जाता हूँ—सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने कहा। राजकुमारी छिप गई और सफ़ेद घोड़ी का बेटा महल में गया। भीतर उसे एक और राजकुमारी दिखाई दी जो पहली से भी अधिक सुन्दर थी। वह उसे देख बहुत डर गई और चिल्लाई—तुम यहाँ क्या कर रहे हो, ऊपर के लोक के आदमी। यहाँ तो कोई परिन्दा भी पर नहीं मारता।

मैं तुम्हें आज़ाद कराने आया हूँ, वह बोला।

तो तुम बेकार में ही आए। छः सिरों वाला मेरा पति एक व्याल है। घर पहुँचते ही वह तुम्हें चूर-चूर कर धूल में मिला देगा।

उसके इतना कहते ही व्याल वहाँ प्रकट हो गया। जैसे ही उसकी नज़र सफ़ेद घोड़ी के बेटे पर पड़ी वह उसे तत्काल पहचान गया। मैं तुम्हें

पहचानता हूँ, कुत्ते। तुमने मेरे भाई को मारा था। इस कारण तुम्हें मरना ही होगा। तुम मेरे चाँदी के खेत में चलो। मैं तुमसे युद्ध करूँगा।

वे बहुत देर तक युद्ध करते रहे। अन्त में विजय सफ़ेद घोड़ी के बेटे की हुई। उसने व्याल को ज़मीन पर दे मारा और उसके छः के छः सिर काट दिए।

अब वे तीन थे और वे सब के सब छोटी बहन को आज़ाद करने के लिए चल दिए।

चलते-चलते उन्हें एक महल दिखाई दिया जो सोने के खेत और सोने के जंगल से घिरा हुआ था। यहाँ सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने राजकुमारियों को छुपा दिया और खुद महल में चला गया। वहाँ की राजकुमारी उसे देख इतनी विस्मित हुई कि उसके मुँह से बोल ही नहीं निकले।

तुम यहाँ क्या कर रहे हो, यहाँ तो कोई परिन्दा भी पर नहीं मारता—राजकुमारी ने कहा।

मैं तुम्हें आज़ाद कराने आया हूँ—सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने उत्तर दिया।

तब तो तुम बेकार में ही आए हो। मेरा पति बारह सिरों वाला एक व्याल है। जब वह घर आएगा तो तुम्हारे टुकड़े-टुकड़े कर देगा। उसके मुँह से शब्द अभी निकले ही होंगे कि महल के दरवाजे पर भयंकर धमाका हुआ।

मेरे पति ने बारह मील की दूरी से डंडा फेंका है। वह किसी भी क्षण यहाँ आ सकता है। झटपट कहीं छुप जाओ—राजकुमारी बोली।

सफ़ेद घोड़ी का बेटा चाहता भी तो नहीं छुप सकता था। उसी क्षण व्याल आ धमका। सफ़ेद घोड़ी के बेटे को देखते ही वह उसे पहचान गया।

तो कुत्ते, तुम यहाँ हो। तुमने मेरे दो भाइयों को मारा। इसलिए मरना तो तुम्हें होगा ही। चलो, मेरे सोने के खेत में आओ। मैं तुमसे युद्ध करूँगा।

बहुत देर तक उनका युद्ध चलता रहा। कोई भी दूसरे पर विजय न पा सका। तब व्याल ने सफ़ेद घोड़ी के बेटे को इतने ज़ोर से ज़मीन पर

पटका कि वह घुटनों तक ज़मीन में धँस गया। गुस्से में सफ़ेद घोड़ी का बेटा उछला और उसने व्याल को ऐसी पटखनी दी कि वह कमर तक ज़मीन में धँस गया। इस पर व्याल ने उछल कर सफ़ेद घोड़ी के बेटे को ऐसी पटखनी दी कि वह छाती तक ज़मीन में धँस गया। इस बार सफ़ेद घोड़ी का बेटा फिर उछला और उसने व्याल को ज़मीन में इतना धँसा दिया कि उसके सिर ही सिर दीखते थे। तब उसने तलवार निकाली और उसके बारह के बारह सिर काट डाले।

उसके बाद वह महल में गया जहाँ तीनों राजकुमारियाँ प्रतीक्षा कर रही थीं।

वे सभी के सभी आगे बढ़ गए। वे उस टोकरी के पास पहुँच गए जिसमें बैठ सफ़ेद घोड़ी का बेटा पाताल लोक में पहुँचा था। उन्होंने हर तरह से कोशिश की वे चारों के चारों उस टोकरी में समा जाएँ पर यह सम्भव न हो पाया। तब तीन राजकुमारियों को किसी तरह टोकरी में बैठाया गया। सफ़ेद घोड़ी का बेटा इन्तज़ार करता रहा कि टोकरी फिर से नीचे आएगी और उसमें बैठ वह ऊपर पहुँच सकेगा।

तीन दिन और तीन रात वह इस इन्तज़ार में रहा। यह भी सम्भव था कि वह इन्तज़ार ही करता रहता, क्योंकि जैसे ही तीन सेवकों ने तीन राजकुमारियों वाली टोकरी खींची उनका दिल उन पर आ गया और उन्होंने उनसे शादी कर ली। अब उनकी इच्छा टोकरी को नीचे लटकाने की नहीं थी। वे तो यही चाहते थे कि सफ़ेद घोड़ी का बेटा पाताल में ही बना रहे।

जब सफ़ेद घोड़ी का बेटा इन्तज़ार करते-करते थक गया तो वह उदास होकर चल दिया। वह थोड़ी दूर ही गया होगा कि तेज़ बारिश आ गई। उसने अपना चोगा कस लिया पर बारिश इतनी ज़ोर से हो रही थी कि वह भीगता ही गया।

तब वह बारिश से बचने की जगह की तलाश करने लगा। इसी तलाश के दौरान उसे एक घोंसला दिखाई दिया जिसमें तीन चूज़े थे।

उसने उन चूज़ों को बाहर तो नहीं निकाला पर आराम से उन्हें अपने चोगे से ढक दिया और स्वयं एक झाड़ी के नीचे शरण ली।

शीघ्र ही उन चूज़ों का बूढ़ा बाप घर वापस आ गया।

चूज़ों से उसने पूछा—तुम्हें किसने ढँका है?

हम आपको नहीं बताएँगे क्योंकि आप उसे मार डालेंगे।

भला मैं उसे क्यों मारने लगा? चूज़ों से उसने कहा। उसने तुम्हें बचाया है। मैं तो उससे अपना आभार व्यक्त करना चाहता हूँ। बूढ़ा बोला।

वह उस झाड़ी के नीचे है। वह बारिश थमने का इन्तज़ार कर रहा है ताकि अपना चोगा वापिस ले जा सके।

बूढ़ा झाड़ी के पास गया और सफ़ेद घोड़ी के बेटे से बोला—मेरे बच्चों को बचाने के लिए मैं किन शब्दों में तुम्हारा धन्यवाद करूँ?

मुझे कुछ नहीं चाहिए—सफ़ेद घोड़ी का बेटा बोला।

कुछ ज़रूर माँगो। मैं बिना पुरस्कार दिए तुम्हें जाने नहीं दूँगा।

तो फिर मुझे ऊपर की दुनिया में पहुँचा दो।

अगर और किसी ने इस तरह की माँग पेश की होती तो वह अब से एक घण्टे तक भी जिन्दा न रहता। पर तुम्हारा यह काम मैं करूँगा। जाओ, तीन पाव रोटियाँ खरीदो और उसके तीन-तीन हिस्से करो। अगर मैं दाईं ओर झुकूँ तो एक पाव रोटी का दाईं ओर का टुकड़ा और अगर बाईं ओर को झुकूँ तो बाईं ओर का टुकड़ा मेरे मुँह में डाल देना। अगर तुमने यह नहीं किया तो मैं तुम्हें फेंक दूँगा।

सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने ठीक वैसा ही किया जैसा कि उससे कहा गया था।

अब सफ़ेद घोडी का बेटा और बूढ़ा ऊपर की दुनिया के रास्ते पर थे। काफ़ी देर चलने के बाद बूढ़े ने अचानक अपना सिर दाईं ओर मोड़ा। सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने उसके मुँह में पाव रोटी डाल दी। फिर उसने सिर बाईं ओर मोड़ा और सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने बाईं ओर का टुकड़ा उसके मुँह में डाल दिया। इस तरह एक-एक कर तीनों पाव रोटियों के टुकड़े उस बूढ़े

ने खा लिए। अब ऊपर की दुनिया की रोशनी कुछ-कुछ दीखने लगी थी। अब अचानक बूढ़े ने अपना सिर बाईं ओर मोड़ दिया। अब पाव रोटी का टुकड़ा तो बचा नहीं था अतः सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने चाकू निकाला और अपनी बाईं बाँह काटकर उसके मुँह में डाल दी। इसी प्रकार जब उसने सिर को दाईं ओर मोड़ा तो उसने दाईं जाँघ काट कर उसे खिला दी।

अब वे ऊपर की दुनिया में थे। पर सफ़ेद घोड़ी का बेटा कहीं जाने लायक नहीं रहा था। उसकी बाँह और जाँघ तो रही नहीं थी वह ज़मीन पर पड़ा रह गया।

तब बूढ़े ने अपने पंख के भीतर से शराब की बोतल निकाली और उसे सफ़ेद घोड़ी के बेटे को दिया।

उसने उससे कहा—चूंकि तुम इतने दयालु थे कि तुमने अपनी बाँह और जाँघ तक मुझे खाने के लिए दी—अतः इसे लो और इसकी शराब पी जाओ। सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने वैसा ही किया। और भले ही विश्वास न हो, उसे पीते ही उसकी बाँह और जाँघ फिर से उग आईं। नई बाँह और जाँघ पहली बाँह और जाँघ से सात गुना अधिक मजबूत थीं।

बूढ़ा तो पाताल की ओर उड़ गया और सफ़ेद घोड़ी का बेटा अपने तीन सेवकों की तलाश में लग गया। जैसे ही वह चलता गया उसे भेड़ों का रेवड़ दिखाई दिया। उसने चरवाहे को आवाज़ लगाई—यह भेड़ों का रेवड़ किसका है?

तीन मालिकों का—लोहे को गूँधने वाले, पत्थर चूर करने वाले और पेड़ उखाड़ने वाले का।

तुम बता सकते हो कि वे कहाँ रहते हैं?

चरवाहे ने उसे रास्ता बता दिया। शीघ्र ही वह लोहा गूँधने वाले के महल में पहुँच गया। उसकी समृद्धि देख उसकी आँखें चौंधिया गईं। वह चलता गया और अन्त में लोहा गूँधने वाले तक पहुँच गया जो उसे देख बुरी तरह डर गया, उसे समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। सफ़ेद घोड़ी के बेटे ने उसे कस कर पकड़ा और खिड़की के बाहर फेंक दिया जिससे वह मौत के मुँह में चला गया। तब उसने राजकुमारी का हाथ

पकड़ा और वे दोनों पत्थर चूर करने वाले और पेड़ उखाड़ने वाले के पास गए। उसका मन उन्हें भी मौत के घाट उतारने का था पर जैसे ही उन्होंने सुना कि वह पाताल लोक से लौट आया है डर के मारे उनके प्राण निकल गए।

इस सबके बाद सफ़ेद घोड़ी का बेटा तीनों राजकुमारियों को साथ ले उनके घर उनके पिता से मिलने गया। वृद्ध राजा ने जब अपनी बेटियों को देखा तो उसकी ख़ुशी का पारावार न रहा। सारी कहानी सुनने के बाद उसने अपनी छोटी बेटी का विवाह सफ़ेद घोड़ी के बेटे के साथ कर दिया और अपना आधा राज भी उसे दे दिया। उनका विवाह इतनी धूमधाम और आनन्दोल्लास से हुआ कि शायद ही किसी और का हुआ हो। अगर उनकी अब तक मृत्यु नहीं हुई होगी तो अभी तक वे सुख-पूर्वक जीवन बिता रहे होंगे।

टिप्पणी

सफ़ेद घोड़ी के बेटे की कहानी हंगरी के लोककथा साहित्य की अति प्राचीन कथाओं में से है। इसमें वृक्ष के आसमान को छूने और अपार शक्तिमत्ता के पीछे आदर्श है माँ का सात साल तक अपना स्तन्य पान कराने का जिसके फलस्वरूप कथानायक पेड़ उखाड़ने वाले, पत्थर चूर करने वाले तथा लोहा गूँधने वालों पर विजय प्राप्त करता है, दुष्टात्मा सात सिरों वाले वेताल को धता बताता है, बारह सिरों वाले व्याल को मारता है और अन्त में राजकुमारियों में से सबसे सुन्दर राजकुमारी से विवाह करता है। उसकी इन समस्त उपलब्धियों के मूल में मातृस्तन्य है जिससे वह इतनी शक्ति अर्जित करने में समर्थ हो पाता है।

अपराह्ण में मैं थोड़ी देर के लिए डॉ. लक्ष्मण सिंह बिष्ट के साथ दूतावास की कार में दर्शनीय स्थानों को देखने के लिए प्रस्थान करता हूँ। वे स्थान वही हैं जिन्हें मैंने पहले की यात्राओं में देखा है। वे हैं एक दुर्ग और एक पहाड़ी। रास्ते में हम एक झील को पार करते हैं और एक

स्क्वेयर को जिसका नाम एक हंगेरियन उपन्यासकार के नाम पर रखा गया है।

8-06-2000

प्रातः 9 बजे जीवशक्ति के चिकित्सक डॉ. बीरो लद्दाख की लेह नामक राजधानी में बौद्ध विहारों में जाने हेतु तिब्बती विद्वान् माननीय रिन पोचे के लिए मेरी ओर से एक पत्र के लिए मेरे पास आते हैं। उन्होंने सुना है कि उन विहारों में एक में एक ऐसी पाण्डुलिपि है जिसमें प्रभु यीशु मसीह के वाराणसी जैसे स्थानों में गमन का उल्लेख है।

10 बजे डॉ. फोरिझ लासलो अपने दो छात्रों के साथ आते हैं। आते तो हैं वे आल्फ्रेड नार्थ वाइटहेड द्वारा लिखित 'प्रोसेस एण्ड रियेलिटी' पुस्तक की प्रति वापस लेने के लिए जो उन्होंने मेरी पत्नी को पढ़ने के लिए दी थी क्योंकि उन्होंने एतदर्थ अपनी इच्छा प्रकट की थी, पर इस अवसर का वे अपने दो छात्रों का मुझे परिचय देने के लिए भी उपयोग करना चाहते हैं जोकि सरस्वती पर कार्य कर रहे हैं। छात्रों के नाम हैं–सास्लिलि और शुएगी कॉता। मैं डॉ. लासलो से कहता हूँ कि मैं केन्द्रीय संस्कृत मण्डल जो भारत सरकार की संस्कृत विषयक नीति-निर्धारण के लिए सर्वोच्च संस्था है, को एक प्रस्ताव भेजना चाहता हूँ। प्रस्ताव यह है कि युवा संस्कृत विद्वानों, दोनों ही प्रकार के, अध्यापक भी और शोध छात्र भी, 35-45 वर्ष की उम्र के अध्यापक और 25 से 35 की उम्र के शोध छात्रों को भारत आने की सुविधा दी जाय जिससे कि वे अपने को जीवित संस्कृत-परंपरा से परिचित करा सकें। पुरातन पद्धति के संस्कृत पंडितों के सम्पर्क में आने के कारण उन्हें संस्कृत शिक्षा के स्वरूप का साक्षात् अनुभव हो सकेगा। इस सम्पर्क के लिए 6 महीने की अवधि हो सकती है। राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान उन्हें छात्रवृत्ति (सहायता राशि) दे जिससे वे विशेष-विशेष विषयों में सघन पाठ्यक्रम द्वारा अध्ययन कर सकें और अपनी ही वय के अन्य छात्रों के साथ उनका मेल-मिलाप हो सके।

मेरे इस विचार को डॉ. लासलो और उनके छात्र बहुत पसन्द करते हैं। मैं अपनी बात और अधिक स्पष्ट करता हूँ। वैदिक मंत्रों या संस्कृत पद्यों का संस्कृत पण्डितों के मुख से सुनना अथवा उनके कैसेटों को सुनना एक ही बात नहीं है। कैसेट्स साक्षात् मुख से उच्चारित मंत्रों अथवा गद्य और पद्य का अथवा साक्षात् किए जा रहे कर्मकाण्ड का स्थान नहीं ले सकते। बात चलते-चलते एक अन्य विषय पर भी आ जाती है और वह यह है कि इससे युवा पाश्चात्य संस्कृत विद्वानों को संस्कृत-सम्भाषण सीखने का भी अवसर मिलेगा और मूल संस्कृत लेखन में भी उनकी प्रवृत्ति होगी। मैं डॉ. लासलो और उनके छात्रों को बताता हूँ कि मैं आजकल पाश्चात्य संस्कृतज्ञों की संस्कृत रचनाओं के सङ्ग्रह में लगा हूँ। इस विषय पर इस समय भी मेरे पास पर्याप्त सामग्री है पर किसी भी हंगेरियन विद्वान् का संस्कृत लेखन मेरे पास नहीं है। मैं डॉ. लासलो को बताता हूँ कि वे पता लगाएँ कि ऐसे कोई हंगरी के विद्वान् हैं जिन्होंने संस्कृत में लिखा है। यदि नहीं लिखा है तो मैं उनसे कहता हूँ कि वे स्वयं लिखें। मैं उनसे यह भी कहता हूँ कि मैं उन्हें संस्कृत में लिखूँगा और वे मुझे उत्तर संस्कृत में दें। यह विचार उन्हें जँचता नहीं। उनकी टिप्पणी इस पर यह है कि इसे किसी पर लादना ठीक नहीं होगा। सम्भवतः उन्होंने यह सोचा कि मेरा अभिप्राय है कि वे पद्य में लिखें जोकि छंद के बंधन के कारण किसी भी पाश्चात्य विद्वान् के लिए निश्चित ही कठिन है। पर जब मैं स्पष्टीकरण देता हूँ कि वे गद्य में भी अपने उत्तर मुझे भेज सकते हैं तो वे इसे स्वीकार करते हैं।

उनके और उनके छात्रों के जाने के बाद मैं डॉ. पेतैर हॉयतो के पास जाने के लिए तैयार होता हूँ। उन्होंने मुझे और मेरी धर्मपत्नी को मध्याह्न भोजन के लिए आमंत्रित किया है। वे शिक्षा मंत्रालय के प्रवेश द्वार पर हमें मिलते हैं और हमें पास के रेस्तरां में ले जाते हैं। रेस्तरां की ओर जाते-जाते वे कहते हैं कि श्रीमती लक्ष्मी पुरी इस समय लण्डन में हैं। श्री आर. एस. ऑइओला रोमानिया में हैं। सो इस समय आप भारत के राजदूत हैं। उनकी इस बात पर हम खिलखिला कर हँस उठते हैं। भोजन के समय मैं पेतैर हॉयतो को बताता हूँ कि दो दिन पूर्व एक महिला ने मुझे

'सफेद घोड़ी का बेटा' शीर्षक लोककथा की एक पुस्तक भेंट की थीं जिसे मैं तत्काल पढ़ गया और जिसका मैंने हिन्दी में अनुवाद भी कर लिया है। मैं डॉ. पेतैर हॉयतो से कहता हूँ कि मैं अंग्रेज़ी में हंगेरियन लोककथाओं पर पुस्तकों की तलाश में हूँ जिसका हिन्दी अनुवाद बाद में पुस्तक रूप में प्रकाशित करने का मेरा मन है। शीर्षक मैंने इसका सोचा है—हंगरी की लोक कथाएँ। यह भारत के लोगों को हंगरी के लोकसाहित्य से परिचित करा सकेगी। इससे एक महत्वपूर्ण उद्देश्य की सिद्धि होगी। वह उद्देश्य है हंगरी और भारत का एक दूसरे के और निकट आना। इसके साथ मैं यह भी कहता हूँ कि मुझे पूरा विश्वास है कि इस प्रकार के प्रकाशक मिल जाएँगे जो इसे प्रकाशित कर देंगे। श्री पेतैर मुझे यह बताते हैं कि कुछ समय पूर्व तक हंगेरियन सांस्कृतिक केन्द्र प्रकाशन का भी काम करता था और इस प्रकार की पुस्तकें प्रकाशित करता था। वे यह भी कहते हैं कि अभी तक तो यह गोपनीय है पर यह सम्भावना है कि वे दिल्ली में हंगेरियन सांस्कृतिक केन्द्र के निदेशक पद पर नियुक्त हो जाएँ क्योंकि डॉ. गेज़ा बैत्लैनफॉल्वी सितंबर में अपना कार्यकाल पूरा कर रहे हैं। पर यह सब भगवान् के हाथ है।

भोजन समाप्त होने पर मैं श्री ऑइओला के घर लौट आता हूँ और लगभग एक घण्टे के विश्राम के बाद 'संस्कृत भाषा के परिप्रेक्ष्य में भारतीय संस्कृति' विषय पर भाषण के लिए अतवश लोरान्द विश्वविद्यालय के लिए चल देता हूँ। भाषण के समय श्रोताओं की उपस्थिति मुझे चकित कर देती है। पूरा का पूरा जनसमुदाय भाषण सुनने के लिए उपस्थित है जो मुझमें एक अपूर्व स्फूर्ति का संचार करता है।

सन्ध्या के समय लगातार फोटो खींचने के लिए डॉ. पेतैर हॉयतो मुझे अपने घर ले जाते हैं। हर कोण से फोटो लेने में वे एक पूरा का पूरा रोल ही खर्च कर देते हैं। उनकी धर्मपत्नी आग्नेश उनके स्वयं के बनाए हुए केक हमें खाने को देती हैं जिनका अपना अलग ही स्वाद है। श्री पेतैर कहते हैं और यही बात उनकी धर्मपत्नी भी कहती हैं कि जब से हम इस

घर में आए हैं हमारी इच्छा रही है कि यहाँ पूजा की जाय, पर अभी तक हम इसके लिए व्यवस्था कर नहीं पाए। भारतीय दूतावास के एक सज्जन ब्राह्मण थे। हमने उनसे पूजा करवाने का प्रयास किया पर किसी कारणवश वे टालते ही गए। मैं और मेरी धर्मपत्नी उन्हें कहते हैं कि अगली बार जब हम आएँगे तो हम पूजा करेंगे। उनकी पत्नी कहती हैं कि वही इस मकान में रहने आने वालों में सबसे पहले से रह रहे हैं। पहले यहाँ कोई और रहता था। जबसे वे इस घर में आए हैं, उन्हें अच्छा नहीं लग रहा है। इसलिए उनकी इच्छा है कि पूजा करवाई जाय। श्री पेतैर और आग्नेश (उनकी पत्नी) के ड्राइंग-रूम में हिंदू देवी-देवताओं की अनेक दारुमयी प्रतिमाएँ हैं जो उन्होंने अपने भारत के प्रवास में इकट्ठी की थीं। श्री पेतैर का कमरा एक लघु भारत है। जिससे पता चलता है कि उन्हें भारत से कितना प्रेम और लगाव है।

उनके घर से चलने से पूर्व नीचे की मंजिल में बहिर्द्वार पर मैं वैदिक मंत्रों का उच्चारण करता हूँ और उनकी समृद्धि और कल्याण के लिए अपनी शुभकामनाएँ अर्पित करता हूँ जिससे श्री पेतैर और उनकी पत्नी बहुत प्रसन्न होते हैं।

09-06-2000

प्रातः 9.30 बजे, जैसा कि पूर्वदिन में निर्धारित किया गया था, मैं डॉ. लासलो के साथ धर्म गेट बुद्धिज़्म कालेज जाने के लिए उद्यत होता हूँ। मेरी पत्नी भी मेरे साथ जाती हैं। मेरी भेंट पुस्तकालयाध्यक्ष श्री योझेफ़ वेग से होती है जिनके विषय में मुझे बताया गया है कि वे तिब्बती, पालि और संस्कृत जानते हैं। डॉ. लासलो और वे हमें पुस्तकालय दिखाते हैं। पुस्तकालय अभी बन ही रहा है। तब भी उसमें पर्याप्त पुस्तकें हैं। कॉलेज के संस्कृत अध्यापक श्री तिबोर अपने छात्रों की संस्कृत व्याकरण की मौखिक परीक्षा लेने में व्यस्त हैं। समय बीतता जा रहा है और हमें नोरा और अन्य लोगों के साथ 12 बजे मध्याह्न भोजन के लिए पहुँचना है।



धर्म गेट बुद्धिज़्म कालेज के संस्कृताध्यापक श्री तिबोर किर्तवैल्यैशी (बाईं ओर सबसे प्रथम) तथा उनके संस्कृत छात्रों के साथ प्रो. सत्यव्रत शास्त्री और उनकी धर्मपत्नी

मुझे चिंता में देख डॉ. लासलो कहते हैं कि वे मुझे परीक्षा कक्ष में भी ले जा सकते हैं पर विद्यार्थी संकोच में पड़ जाएँगे और उन्हें घबराहट भी होगी। दूसरी बात कि आपके आने की यहाँ पर सूचना नहीं दी गई थी। मैं उनकी बात को पूरी तरह समझता हूँ और परीक्षा के समाप्त होने की प्रतीक्षा करता हूँ।

पुस्तकालयाध्यक्ष हमें तिब्बती अध्ययन के बारे में कुछ सूचना देते हैं। वे कहते हैं कि तिब्बती के उनके यहाँ दो तरह के पाठ्यक्रम हैं। एक तो भाषा को सीखने के लिए अनुवाद पाठ्यक्रम और दूसरा तिब्बती साहित्य और दर्शन का पाठ्यक्रम। माननीय दलाई लामा ने तिब्बती पढ़ाने के लिए एक अध्यापक भेजा था। पहले वर्ष उनका अध्यापन एक दुभाषिये के माध्यम से चला। हममें से जो कोई तिब्बती जानता था वह ही उनकी बात हंगेरियन में समझा देता था।

मौखिक परीक्षा समाप्त होने पर श्री तिबोर किर्तवैल्यैशी अपने दो छात्रों के साथ उपस्थित हो जाते हैं जिनमें से एक वही है जो कल डॉ. लासलो के साथ मुझसे मिलने आया था। "आप किस तरह के प्रश्न उनसे पूछते हैं"? मैं श्री तिबोर से पूछता हूँ। वे मुझे प्रश्नपत्र दिखाते हैं। मैं पाता हूँ कि उनमें संस्कृत समासों पर प्रश्न हैं। मैं छात्रों से संस्कृत व्याकरण के बारे में पूछता हूँ। मेरा प्रश्न है कि क्या बहुव्रीहि एक समस्त शब्द है। वे कहते हैं, हाँ। इसका अर्थ है जिसके पास बहुत-सा चावल है। मैं अगला प्रश्न पूछता हूँ कि रामलक्ष्मणौ में कौन-सा समास है। उत्तर होता है– समाहार द्वन्द्व। मुझे बहुत प्रसन्नता होती है कि छात्र मेरे प्रश्न का उत्तर दे सके। वे विषय को गंभीरता से और ईमानदारी से लेते हैं। मैं कॉलेज में आने से और युवा छात्रों से मिलने से बहुत सन्तोष का अनुभव करता हूँ। हंगरी जैसे सुदूर देश में संस्कृत छात्रों का मनोयोगपूर्वक अध्ययन देख मुझे बहुत संतोष मिलता है। कॉलेज के नाम के साथ बुद्धिस्ट शब्द लगा है तो भी हिंदू धर्म से सम्बद्ध विषयों का एवं संस्कृत भाषा और साहित्य का अध्ययन-अध्यापन यहाँ पर्याप्त मात्रा में है। हमें लगता है कि इस कॉलेज को हर तरह का प्रोत्साहन मिलना चाहिए।

हम श्री ऑइओला के घर लौट आते हैं। वहाँ सुश्री नोरा 'गोही' नामक एक हंगेरियन शाकाहारी भोजनालय में मध्याह्न भोजन के लिए हमें लेने आती हैं। श्रीराम शर्मा, उनकी पत्नी और श्रीमती ऑग्नैता हमें वहाँ मिलते हैं। वहाँ पर विविध प्रकार के व्यंजनों की दो थालियाँ हैं। एक को सूर्य कहा जाता है और दूसरी को चन्द्रमा। मेरी पत्नी सूर्य की थाली मँगवाती हैं और मैं चन्द्रमा की। भोजन काफ़ी ठीक है। हम 4 बजे के आसपास श्री ऑइओला के घर वापस आ जाते हैं, जहाँ श्रीमती इल्दिको फ़ौबियान नाम की एक गणितज्ञ महिला से, जो संस्कृत और भारतीय संस्कृति में रुचि रखती हैं, हमारी भेंट होती है। उन्होंने रामायण-सम्मेलन में भाग लिया था। मेरी पत्नी उनसे पूछती हैं कि रामायण-सम्मेलन में आपको कौन-सी चीज अच्छी लगी। बिना किसी झिझक के वे कहती हैं, (मेरी ओर लक्ष्य कर) प्रो. का भाषण। इस उत्तर से मैं बहुत प्रसन्न होता हूँ जबकि जिस तरह से मेरी उपस्थिति में यह प्रश्न पूछा गया वह मुझे अच्छा नहीं लगा, क्योंकि मेरे सामने ही सामने उनका किसी और तरह का उत्तर शायद मुझे अप्रिय लगता और उत्तर देने वाले के लिए भी यह एक संकोच का कारण बनता क्योंकि यह अशिष्टता के अंतर्गत आता। श्रीमती फ़ौबियान यह भी कह सकती थीं प्रश्न के उत्तर में कि सुष्मिता का नृत्य या रामायण की फिल्म। वस्तुतः यह उनकी गरिमा ही थी जिसने वातावरण को भारी नहीं होने दिया। प्रश्न का चयन बहुत सोच-समझ कर करना चाहिए।

इल्दिको फ़ौबियान अभी वहीं थीं कि सुश्री नोरा वहाँ आ जाती हैं और वहाँ रुकती हैं जबकि हम प्रो. इल्दिको पुश्काश के पति के साथ, जो इस्लामिक अध्ययन के विशेषज्ञ हैं, रात्रि-भोजन के लिए चल देते हैं। पुश्काश के पति का नाम तोमाश पिल है। उन्होंने हंगेरियन में कुरान का अनुवाद किया है। इस तरह का कार्य करने वाले एकमात्र विद्वान् वे ही हैं। उनके अनुवाद में इस धर्मग्रन्थ पर भाषा-विषयक और दर्शन-सम्बन्धी टिप्पणियाँ भी हैं। रात्रि-भोजन से वापस आते समय दूतावास का ड्राइवर हमसे पूछता है, आप हंगरी में फिर से कब आ रहे हैं? उसका यह प्रश्न

हमें गहरे तक छू जाता है। मेरी पत्नी मेरी अपेक्षा अधिक उन्मुक्त हैं और कहती हैं कि हम निश्चय ही आएँगे। जबकि मैं कुछ समय तक चुप रहने के बाद धीमे से यही शब्द कह पाता हूँ, सब कुछ भगवान् के हाथ है। मिक्लोश (ड्राइवर) कहता है कि आप आएँगे। "हम आना चाहेंगे पर आ पाएँगे या नहीं यह कह नहीं सकते।" यह मैं कहता हूँ। सधी-सधाई योजनाओं को भी विफल होते हुए मैंने देखा है, इसलिए इस विषय पर दृढ़तापूर्वक कह पाना मेरे लिए संभव नहीं। इस तरह के विषयों के प्रति एक निरपेक्षता का भाव धीरे-धीरे मेरे मन में घर करने लगा है। समय ने मुझे बहुत कुछ सिखा दिया है।

कल यहाँ से हमारे प्रस्थान का दिन है। इसका मात्र विचार ही हमें उदास कर देता है।

□□□

अनुक्रमणिका

फ

ब

भ

Hungarian Words

In Devnagiri As Pronounced Locally	In Roman Characters As in Vogue
अतवश लोरान्द यूनिवर्सिटी	Eötvös Lorand University
अस्सी सान् फ्रांसी	Összi Szán Fránczi
आग्नेश पॉप	Agnés Pap
आदाम ए. लाज़ार	Adam A. Lázár
आर्पाद	Árpád
आर. एस. ऑइओला	R. S. Aiola
आदाम	Ádám
आदाम ए. लाज़ार	Ádám A. Lázár
इश्तवान मौयोर	István Major
इमरै लॉज़ार	Imre Lázár
इमरै गोइन	Imre Goin
इल्दिको पुश्काश	Ildiko Puskás
इल्दिको फ़ौबियान	Ildiko Fabian
इन् मैमोरियम	In Memorium
इश्तवान् यानोशी	István Jánosi
उत्सा मैगोश	Utsa Megos
उल्किशिया कैश्त्र	Ulkisia Kaistra
ऊरॉल	Urál
एलैमर बिश्तैर्की	Elemer Biszterski

एवा ऐरादी	Eva Eradi
एवा तोथ	Eva Toth
ऐउरोपा	Europa
ओसवोल्ड सेमेरेन्सी	Oswold Semerensi
आग्नेता	Ágnetá
एस्तैरगोम	Esztergom
कारपाथियन	Cárpáthian
कासल स्क्वेयर	Castlle Square
कृष्ण वल्ग्य (कृष्ण वैली)	Krishna Völgy
कैथेरिन शोश	Catherine Sos
कोरोशी चोमा शान्दोर आल्तालानौश इश्कोला एज़ गिमनाज़िउम	Körössi Csoma Sándor általános iskola es gimnázium
कोशुथ लायोश	Kosuth Lajos
कुन्शाग	Kunsag
के. ए. एन्तानोवा	K. A. Entanova
गॉज़्दा एदित	Gazda Edit
गार्दोनी गेज़ा	Gárdoni Géza
गाल बालाझ	Gal Balazs
गिज़ैला	Gizella
गैर्गेय हिदाश	Gergely Hidas
द्यूला वायतिला	Gyula Woijtilla
द्योज़ो	Gyozo
गेज़ा बेत्लैनफ़ाल्वी	Geza Bethlenfalvi
गैस्टेपो	Gestapo
चोमा द करश सोसाइटी	Csoma de Körös Society
चोन्तवारी	Csontvári
टैगोर शेन्ताय	Tagore Sétány

डेन्यूब	Danube
ततशी चौबा	Töttösi Csaba
तिबोर किर्तवैल्यैशी	Tibor Kirtvelesi
तिवादोर चोन्तवारी	Tivador Csontvari
तीसा	Tisza
तैरयैक	Terjek
तोकौय	Tokai
तिवादोर चोन्तवारी	Tivador Contvari
तेम्प्लोन दोमू	Templon Dom
तोथ	Toth
तोथ इबोया	Toth Ibolya
तॉमाश पिल	Támás Pilh
लिप्ताक यूझन्ना	Liptak Zsuzsanna
दान्यी विक्तोरिया	Danyi Viktoria
दूना	Duna
दैब्रैत्सैन	Debrecen
दोश्ज़ा	Dozsa
दोश्ज़ा घर्घ (सांस्कृतिक भवन)	Dozsa Gyorgy
दोश्ज़ा घर्घ म्यूवैलोदेशी हाज़	Dozsa Gyorgy Muvelodesi Haz
घोर	Gyor
घोर्घोसन्त	Gyergyoszent miklos
नोरा मैस्लर	Nora Meszler
नॉरित्वां	Naretva
पार्थियन	Parthian
पापो इबेर	Papo Iber
पुश्काश	Puskás
पेच	Pécs
पेतैर हायतो	Péter Hajtó

पैश्त	Pest
पैन्नोर (विश्वविद्यालय)	Pennor
पैन्नोन हैल्मै	Pennon Helme
फ़ोबियान	Fobian
फ़ोरिन्त	Forint
फॉर्या ऐर्नो	Farja Erno
फैलैशेग	Feleség
फैहैर यूदित	Feher Judith
फोरिझ लासलो	Forizs Laszlo
बॉलॉतोन	Balaton
बॉलॉतोन फ़्यूरेद	Balaton Füred
बिश्तैश्की	Bisterski
बिर्स्की	Byrski
बीथोवन	Beethovan
बीरो	Biro
बुडापैस्त	Budapest
बुदापैश्त	Budapest
बेला चतुर्थ	Bela IV
बेन्फी	Benfy
बेनेडिक्टिव पैन्नोन हैल्मे मठ	Benedictive Pennon Helme (Monastery)
बैन्दैगुज़	Bendeguz
बोकात्सो	Bocacco
मारिया न्येजैशी	Maria Négyesi
मार्गित कवेश	Margit Köves
मात्याश	Mátyás
मिक्लोश	Miklos
मौद्यार इगाज़शाग एश एलैत पार्तया	Magyar Igazság És Élet Pártja

मौद्यार न्यैल्व सैरकैज़्तै	Magyar nyelv szerkeszte
यानोश हून्यादी	János Hunyádi
यानोशी	Jánosi
युग हाफ़मैन बोलोनिन	Yug Halfman Bolonin
यूडित पोल्गार	Judith Polǵar
योझैफ़ वैकेर्दी	Josef Vekerdi
योझेफ़ वैग	Jozsef Vegh
रिहाई स्मित	Rihai Smith
रोज़ालिया	Rozália
रोहलर इश्तवान	Röhler Istvan
रोत्लेर इल्दिको	Rothler Ildiko
रौयनॉय मिकलोश	Rajnai Miklos
लिलि वागो	Lili Vágo
लायोश कोशुथ	Lajos Kosuth
लिपूताक् सुसन्ना	Lipták Zsuzsanna
वर्ग द्योज़ो	Varga Gyozso
वैरा गौथी	Vera Gothi
श्ताइन	Stein
शान्दोर पैटोफ़ी	Sándor Petöfi
शान्दोर वरेश	Sandor Wörös
शैन्का मारिया आन्ना	Senka Maria Anna
श्तीवन इश्तवान	Stevan Istvan
शिमोन नोरा	Simon Nora
सास्लिलि	Saslili
शुएगी काता	Suegi Kata
सेकैश फैहेरवार	Székesfehérvár
सेचेन्य इश्तवान	Szecsenyi Istvan
सैन्तैन्द्रे	Széntendre
सैन्त इश्तवान	Szent István

शोबल	Sobal
संस्कृत मौद्यार सोतार	Sanskrit-Magyar Szotár
सस्लिलि	Saslili
हारमात्ता	Hármattá
ह्राप्सबुर्ग	Hapsburg
हामारी	Hámári
हैलिकोल कियॉदो	Helikol Kiyado
होटल बॉलॉतोन फ्यूरैद	Hotel Balaton Füred
होटल मोरोश	Hotel Maros
होटल सौबौत्शाग	Hotel Szabadság
ह्विटनी	Whitney



विजया बुक्स
दिल्ली 110032

ISBN : 978-93-81480-16-8



मूल्य : ₹ 250